अंक : 189–190 सितम्बर–दिसम्बर, 2004



सम्पादक
आर.पी. सराफ

पानी के सवाल पर हमारा व्यापक दृष्टिकोण

पूँजी के तीन मुख्य सिद्धान्त

जम्मू-कश्मीर समस्या के हल का खाका

गलत व सही में भेद करने का सवाल

वैश्विक बेरोजगारी : कारण एवं निराकरण

कांग्रेस-नेतृत्व वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन का

कॉरपोरेट पूँजी का मानवीय चेहरे वाला

सिद्धान्त केवल मिथ्या

अंग्रेजी प्रकाशन : हिम्मतसिंह
हाउस नं. 11A, मैन रोड, राजपुरा मंगोत्रियान
जम्मू-180001 जम्मू-कश्मीर (भारत) फोन : 0191-2585960
Email : saraf_rp@rediffmail.com

हिन्दी प्रकाशन : घनश्याम डेमोक्रेट
23/864, चौपासनी हाउसिंग बोर्ड,
जोधपुर-342 008 (राजस्थान) भारत
फोन : 0291-2715471
E-mail : sajjan_nhcpm@rediffmail.com

पंजाबी प्रकाशन
सुखदेवसिंह भूपाल
गाँव-भूपाल, डाक-मत्ति, जिला-मानसा,
पंजाब (भारत)
फोन : 01652-274551

मूल अंग्रेजी से अनूदित

सहयोग राशि : 10 रु.

Scanned with CamScanner

पानी के सवाल पर हमारा व्यापक दृष्टिकोण

(इस पृथ्वी पर मानव तथा दूसरे जैव-जीवन के लिए हवा के बाद सबसे आवश्यक चीज)

आमतौर पर पानी का सवाल मानवजाति के समस्त इतिहास में मानव के लिए मुद्दा बना रहा है। पानी का यह आम मानवीय मुद्दा आजकल और अधिक स्पष्ट हो गया है जब मानव समुदाय के लिए पानी का मुद्दा नम्बर एक पर आ गया है।

दुनिया में पानी की ऐसी गंभीर स्थिति का कारण इस बात में निहित है कि आज आम आदमी को पता है कि हमारे समस्त ग्रह पर पानी की उपलब्धता में कमी आ रही है। लोगों की इस धारणा को समस्त वैज्ञानिक समुदाय और पानी के विभिन्न विशेषज्ञ सच्चा साबित करते हैं। बहुत सारे वैज्ञानिक विशेषज्ञ यहाँ तक भविष्यवाणी कर चुके हैं कि सन् 2050 तक (यानि आने वाले 46 वर्षों के भीतर) पानी समाप्त हो सकता है। लोगों और वैज्ञानिकों के बीच इस बात पर सहमति है कि पानी की स्थिति के लिए कोई प्राकृतिक घटनाक्रम नहीं बल्कि मानवीय गतिविधि ही मुख्य तौर पर जिम्मेवार है।

हमारे विचार से पानी के बिगड़ते हालात कोई अलग-थलग घटनाक्रम नहीं है बल्कि पर्यावरण की प्रक्रिया (जिसमें वायु, पानी, भूमि, जंगल, जैव विविधता, इत्यादि घटक शामिल हैं) में विद्यमान आम संकट का ही एक भाग है। हमारे ग्रह पृथ्वी पर पर्यावरण ही मानव सहित समस्त जैव-जगत के अस्तित्व की पूर्व-शर्त है। पानी की खराब हो रही स्थिति हमारे पर्यावरणीय संकट का केवल पहला लक्षण है।

वास्तव में, वर्तमान पर्यावरणीय संकट लगभग 200 साल पहले से ही प्रारम्भ हुआ है, जब पूँजी-मालिकों के विद्यमान शासन का दुनिया में प्रादुर्भाव हुआ और सभी मानवीय और प्राकृतिक संसाधनों को इसके मालिकों की सम्पत्ति को बढ़ाने का जरिया बना लिया गया। इस 200 साल पुरानी पूँजी की व्यवस्था ने पर्यावरण विरोधी तकनीक और अमानवीय व्यवहार अपनाकर एक तरफ पर्यावरणीय पहलू को अत्यधिक नुकसान पहुँचाया है तो दूसरी तरफ मानवीय संसाधनों को भारी हानि पहुँचाई है। इस प्रकार मानवीय और पर्यावरणीय उद्देश्य की अवहेलना की है। पानी की गंभीर समस्या (उसके विभिन्न आयामों में) आम पर्यावरणीय एवं मानवीय संकट का एक भाग भी है।

विशेष रूप से, आज प्रत्येक देश में पानी को राष्ट्रीय संसाधन माना जाता है और कॉरपोरेट पूँजी के नेतृत्व वाली सरकारें इसे प्रबन्धित और नियन्त्रित करती है जो अपनी नवीनतम तकनीक के जरिये अभी तक पर्यावरणीय संसाधनों और खासकर पानी को बर्बाद कर रही है। भारतीय पूँजी नेतृत्व वाला राज्य भी पानी सहित समस्त पर्यावरणीय क्षेत्र में तबाही मचा रहा है।

Scanned with CamScanner

आज, जब पानी की समस्या विश्वव्यापी रूप धारण कर चुकी है, कई कॉरपोरेट राष्ट्रीय राज्य, देशों के बीच जल-विवाद के मामले में एक दूसरे पर दोषारोपण कर रहें हैं। देशों के अन्दर जल विवाद पर विभिन्न राजनीतिक ग्रुप एक दूसरे को अपने-अपने जल संकट का कारण बताते हैं। इस तरीके से वे लोगों को दिशा देते हैं कि जल समस्या जैसे कोई टकराववादी मुद्दा हो और इस प्रकार अपने-अपने हानिकारक कार्यक्रमों और कार्यवाहियों के जरिये पानी की खराब होती समस्या के लिए अपने उत्तरदायित्व से मुक्त होने की कोशिश करते हैं।

खेतीबाड़ी एवं किसान विकास मोर्चा, पंजाब मानता है कि लोगों को कॉरपोरेट पूँजी-नेतृत्व वाले शासकों और राजनीतिज्ञों द्वारा ''लोगों के सामने लोग'' खड़े करने के जाल में नहीं फँसना चाहिए। उन्हें पानी से संबंधित सभी मसलों के न्यायिक हल के लिए मानवतावादी और पर्यावरणीय परिप्रेक्ष्य अपनाना चाहिए जिसके अनुसार आज की दुनिया में सभी मसलों का हल शान्तिपूर्ण तरीकों से किया जाए तथा अपने विरोध का केन्द्र शासक कॉरपोरेट पूँजीवादी व्यवस्थाा और उसके मुख्य संचालकों के खिलाफ होना चाहिए, जो वास्तव में हमारे युग की सम्पूर्ण खतरनाक समस्याओं के जनक हैं।

उपरोक्त तथ्य हमें पंजाब की जल समस्या का इसके वास्तविक परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने योग्य बनाते हैं।

पंजाब जल समस्या : धूर्त राजनीतिज्ञों की पैदावार

पंजाब जल समस्या सामान्य तौर पर उभर रही विश्वव्यापी जल संकट का भी भाग है और विशेषतौर पर हालांकि इसका अपना इतिहास है।

इसके बहुत पुराने इतिहास में जाए बिना हम पंजाब जल समस्या को भारत और पाकिस्तान के बीच विश्व बैंक की मध्यस्थता में हस्ताक्षरित हुई (1960) सिंध जल संधि के बाद के सन्दर्भ में नजरसानी करते हैं। इस सन्धि के अनुसार 3 पश्चिमी नदियों (यानि, सिन्ध, झेलम और चिनाब जो पश्चिमी पंजाब में बहती हैं) पर पाकिस्तान को पूर्ण नियन्त्रण सौंप दिया गया और 3 पूर्वी नदियों (यानि, रावी, व्यास, और सतलज जो पूर्वी पंजाब में बहती हैं) पर भारत का नियन्त्रण कायम किया गया, जिसमें से प्रत्येक देश अपने हिस्से के पानी का पूर्ण मालिक होने के नाते अपनी प्राथमिकता के अनुसार उपलब्ध पानी का उपयोग करने का हकदार हो गया। सिन्ध सन्धि दो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न देशो के बीच पानी बंटवारे के विवादित मसले पर समझौते का प्रतिनिधित्व करती है। इस सन्धि के समझौते में राइपेरियन सिद्धान्तों की पूर्णतया अनदेखी की गई है।

पँजाब के कई नेताओं (जो विभिन्न राजनीतिक पार्टियों और किसान संगठनों से संबंधित थे) द्वारा शिकायत की गई कि तीन नदियों (यानि, सतलज, व्यास और रावी) के पँजाव, हरियाणा और राजस्थान (जैसा कि केन्द्र और इन 3 राज्यों के बीच

Scanned with CamScanner

1976 और 1981 की सन्धियों में तथा 1985 के राजीव-लोगोवाल समझौते में भी उल्लेखित किया गया है।) के बीच जल बँटवारे में पंजाब के साथ न्याय नहीं किया गया है, इस वक्तव्य में कुछ सच्चाई हो सकती है। परन्तु, अपनी शिकायतों के औचित्य को आगे बढ़ाने के बजाए इनमें से कई नेताओं, खास करके बड़ी पार्टियों (जैसे, कांग्रेस और अकाली दल) के नेताओं ने हमेशा अपने राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए मसले का उपयोग करने की कोशिश की है।

पंजाब के एक कांग्रेसी मुख्यमंत्री दरबारा सिंह ने 31 दिसम्बर, 1981 को हरियाणा और राजस्थान के साथ जल बंटवारे के समझौते पर हस्ताक्षर किए, जबकि 12 जुलाई, 2004 को दूसरे कांग्रेसी मुख्यमंत्री अमरेन्द्रसिंह ने समझौता कानून को पंजाब द्वारा रद्द करने (सन् 2004 में) का कानून बनाया। अन्य मुख्यमंत्री प्रकाश सिंह बादल ने अपने मंत्रित्वकाल सन् 1977 में पंजाब पुनर्गठन अधिनियम 1966 की धारा 70-80 की वैद्यता (जो पंज़ाब एवम् हरियाणा के बीच पानी के बंटवारे से संबंधित है) को सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी, इन्हीं प्रकाशसिंह बादल ने सन् 2002 में भाजपा के निकट सहयोगी के तौर पर मुख्यमंत्री बनने के बाद पंजाब एवम् हरियाणा हाईकोर्ट के दिनांक 15/1/2002 के आदेश, जिसमें सतलज-यमुना कैनाल को एक वर्ष में पूरी किए जाने की आज्ञा दी गई थी, को सुप्रीम कोर्ट में कोई चुनौती दायर नहीं की तथा आज वही प्रकाश सिंह बादल शेखी बघार रहे हैं कि यदि कांग्रेस के मुख्यमंत्री नदी जल के बारे में पांव पीछे हटाते हैं तो मैं व मेरा अकाली दल पंजाब के नदी जल के वाजिब हिस्सा पाने के लिए अन्तिम श्वास तक संघर्ष करेंगे।

पँजाब के जागरूक राजनीतिक और किसान नेताओं को बहुत पहले से यह जानकारी थी कि पंजाब की खेती में दो फसली चक्र (यानि, चावल और गेहूँ) की पद्धति पंजाव के जल संसाधनों और इसकी मिट्टी के उपजाऊपन के लिए भारी हानिकारक है, परन्तु उन्होंने इस दो फसली पद्धति के हानिकारक प्रभावों के बारे में किसानों को सूचित करने के लिए किसी तरह का प्रचार अभियान नहीं चलाया। इसका नतीजा यह निकला है कि पंजाब के भूमिगत जल संसाधनों का 50 प्रतिशत भाग पहले ही व्यय हो चुका है और बाकी बचे पानी के निकास की तैयारी है। पंजाब में समर्थन मूल्य नीति के माध्यम से दो फसली पद्धति को नई दिल्ली द्वारा और आगे प्रोत्साहित नहीं करने की माँग करने के बजाए और पंजाब के किसानों को फसलों के विविधकरण (diversification) के मार्ग पर ले जाने के बजाए ये नेता इस चल रही नुकसानदायक पद्धति पर चुप रहना पसन्द करते हैं।

इस बात को मुश्किल से अनदेखा किया जा सकता है कि जिन पुरानी वास्तविकताओं के आधार पर तीनों राज्यों (यानि, पंजाब, हरियाणा और राजस्थान) को 1976 और 1981 के समझौतों में जल आवंटन किया गया था वे परिस्थितियां अत्यधिक बदल गई है, खास करके पंजाब के मामले में स्थिति तेजी से बदली हैं।

Scanned with CamScanner

ऐसे हालात में, यह पूर्णतया न्यायोचित है कि नये उभरे तथ्यों को देखा जाए और उनके आधार पर तीनों राज्यों को नये सिरे से जल का आवंटन किया जाए।

पंजाब विधान सभा में 12 जुलाई, 2004 को पंजाब समझौता समाप्ति बिल 2004 अंगीकार करने के बाद कुछ नये उभरे अन्धराष्ट्रवादियों ने माँग की है कि पुराने समझौते के तहत हरियाणा और राजस्थान को दिय गए पानी पर रॉयल्टी ली जानी चाहिए। वे इस तथ्य को अनदेखा करते हैं कि भारतीय संविधान (सूची सातवीं, लिस्ट पहली, संघीय लिस्ट, इन्दराज 56), में निहित है ''अन्तर-राज्य नदियों और नदी घाटियों का नियमन और विकास उसी हद तक किया जा सकता है जिसमें ऐसे नियमन और विकास संघ के नियन्त्रण के तहत संसद द्वारा घोषित जनहित के लिए उचित कानून के दायरे में हो।''

संविधान की सूची सातवीं, लिस्ट दूसरी, राज्य लिस्ट, इन्दराज 17वाँ, के तहत राज्य केवल प्रबन्धित करता है ''पानी, यानि, कहा जा सकता है कि संघीय लिस्ट के इन्दराज 56 के प्रावधानों के अनुसार जल आपूर्ति, सिंचाई और नहरों, जल विकास और तटबन्ध, जल संग्रहण और जल विधुत के विषय प्रबन्धित करता है।''

उपरोक्त तथ्यों की रोशनी में यह आवश्यक है कि केन्द्र सरकार एक जल विशेषज्ञों का आयोग नियुक्त करे जो नयी उभरी वास्तविकताओं के आधार पर तीनों संबंधित नदियों में जल की सही उपलब्ध मात्रा का पता करे और वर्तमान समय में पंजाब राज्य की पानी की यथार्थ (सही-सही) आवश्यकता का पता करे और उसके आधार पर तीन संबंधित राज्यों-यानि, पँजाब, हरियाणा और राजस्थान के बीच जल विभाजन की नई सिफारिश करे। (21.8.2004) **-मघरसिंह कुलरियां**

पूंजी के तीन मुख्य सिद्धान्त

उदारवादी और मार्क्सवादी सिद्धान्त

(क) दोनों उदारवादी और मार्क्सवादी सिद्धान्त पूंजी को समाज में अति बहुमूल्य वस्तु मानते हैं। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि ये दोनों सिद्धान्त सामाजिक समृद्धि और प्रगति को पूंजी की वृद्धि दर और प्रतिव्यक्ति पूंजी वृद्धि तथा पूंजी की कुल वृद्धि से मापते हैं। दुनिया का प्रत्येक उदारवादी और मार्क्सवादी सरकार (यानि सभी देशों की सरकारें) उपर्युक्त सिद्धान्त का अनुसरण करती है। इन दो सिद्धान्तों का ग्लोबल चरित्र वैचारिक और प्रशासनिक दोनों तरह से प्रत्येक मानव को पूंजी(अथवा धन) के अधिकतम् संक्रेन्द्रण के लिए प्रेरित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति का दौलत इकट्ठी करने का विश्वव्यापी चरित्र मानव समुदाय के सामाजिक पहलू को पूर्णतया नकारता है और इस प्रकार इसेएक अमानवीय झुण्ड में बदल देता है जहां प्रत्येक अपने लिए जीता है और सभी के लिए कोई नहीं है।

Scanned with CamScanner

दोनों सिद्धान्त मानवजाति की प्रकृति की एकतरफा परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। कॉरपोरेट अवधारणा के अनुसार ''मानव प्रकृति से स्वार्थी है'' (जैसा कि मुक्त-बाजार अर्थशास्त्र के जन्मदादा एडमस्मिथ ने प्रतिपादित किया) जबकि मार्क्सवादी धारणा कहती है कि मानव की प्रकृति सामाजिक है। दोनों मानव की वास्तविक प्रकृति को नकारते हैं, मानव की वास्तविक प्रकृति जैव-सामाजिक है जो दो तरफा मूलभूत लक्षण रखती है यानि सामाजिक के साथ ही निजी।

दोनों सिद्धान्त पूंजी के वास्तविक उत्पादनकर्ता को गलत पेश करते हैं। मार्क्सवादी अवधारणा मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य को पूंजी परिभाषित करती है, यानि मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य जो उसको दी जाने वाली मजदूरी से अलग होता है जिसे काम के दौरान पैदा किया जाता है (जिसे पूंजीपति हड़प जाता है), दूसरे शब्दों में मजदूर अपनी निश्चित कार्यावधि में उसे दी जाने वाली मजदूरी से अधिक मूल्य पैदा करता है जिसे (यानि मजदूरों द्वारा पैदा किया गया अतिरिक्त मूल्य) पूंजीपति हथिया लेता है। इसके उलट, उदारवादी सिद्धान्त चतुराई से चिह्नित करता है कि पूंजी, तकनिकी, श्रम और कच्चे माल का उत्पादन प्रक्रिया में योगदान अपने-आप नहीं हो सकता जब तक कि उत्पादन प्रक्रिया के दौरान इनका उपयोग पूंजीपति द्वारा संगठित नहीं किया जाता।इस प्रकार मार्क्सवादी अवधारणा मजदूर को एकमात्र पूंजी का निर्माता बताती है जबकि पूंजीवादी धारणा पूंजीपति को ही इसका पैदा करने वाला पेश करती है।

(ख) दोनों सिद्धान्त पूंजी के प्रबंध प्रक्रिया को विकृत करते हैं। पूंजीवादी सिद्धान्त पूंजीपति को पूंजी पैदा करने की प्रक्रिया का एकमात्र प्रशासक और नियन्त्रक प्राधिकारी बनाता है। जबकि मार्क्सवादी सिद्धान्त इस कार्य को राज्य (यानि, राजनीतिज्ञों और अफसरशाहों का समिश्रण) के सपूर्द करता है, पूंजी को पैदा करने की प्रक्रिया के प्रबंध और नियन्त्रण में मजदूरों और आम लोगों के अधिकार की किसी भी भूमिका को नकारता है।

दोनों सिद्धान्त पूंजी के नियन्त्रण में श्रम की भूमिका को ताबेदार स्थिति में पहुंचाते हैं।

दोनों सिद्धान्त अपने तात्कालिक और स्थाई कार्यों के लिए राजनैतिक सत्ता हासिल करने के पक्षधर हैं, क्योंकि अधिकतम धन कमाने की प्रक्रिया में राजनीतिक सत्ता एक मुख्य हथियार की तरह काम करती है।

पूंजी का प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त

(क) उपरोक्त वर्णित सिद्धान्त का पक्के तौर पर मानना है कि पूंजी में दो तरफा घटनाक्रम समाविष्ट हैं, यानि, एक तरफ पर्यावरणीय संसाधन और दूसरी तरफ मानवीय संसाधन। ऐसा इसलिए है क्योंकि पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों से ही मानव समुदाय का जीवन बनता है और उनके बिना मानवजाति के लिए किसी भी चीज का

Scanned with CamScanner

कोई मूल्य नहीं है। इस प्रकार यह पैसे (या वित्त) को पूंजी मानने की धारणा को पक्के तौर पर रद्द करती है और यहां तक कि पैसे (या वित्त) वाली पूंजी भी इन दो संसाधनों से ही पैदा होती है, जो मानव के मानसिक और शारीरिक श्रम के साथ प्राकृतिक कच्चे-माल और तकनिकी औजारों के एकीकृत होने का एक रूप है। स्पष्टतया, पूंजी के सभी अवयव-श्रम, तकनिकी और कच्चा माल-पर्यावरणीय और मानवीय संसाधनों के द्वारा प्रदान किये जाते हैं। पैसा केवल विनिमय के माध्यम का प्रतिनिधित्व करता है या बाजार का एक औजार है। फिर भी इस अति महत्वपूर्ण कार्यवाही को ही समाज में सर्वोच्च घटनाक्रम (यानि, पूंजी) का दर्जा नहीं दिया जा सकता है।

इसका मानना है कि मनुष्य एक जैव-सामाजिक घटनाक्रम है जो अपने-आप में दो जुड़े हुए गुणों-निजी ओर सामाजिक को समाए हुए हैं जिनमें से प्रत्येक की अपनी उपयोगिता है। इन दोनों गुणों को तोड़ना मानवजाति की तर्क संगत वास्तविकता को विकृत करना है–जिसका परिणाम हमेशा बर्बादी में निकलता है। इस वक्त चल रहा पर्यावणीय मानवीय संकट भी प्रचलित एक तरफा मानवीय सोच और प्रेरणा का परिणाम है।

(ख) इसका मानना है कि मानव समाज में सम्पन्नता और विकास को मापने का पैमाना केवल मात्र पर्यावरणीय संरक्षण और संवर्द्धन तथा मानव का निरन्तर बढ़ता मानसिक और भौतिक कल्याण का स्तर ही हो सकता है। इस उद्देश्य को एक ऐसे विकास मॉडल को अपनाकर हासिल किया जा सकता है। जिसमें 5 मुख्य उसूलों का कड़ाई से व्यवहार में पालन किया जाए यानि, पर्यावरणीय टिकाऊपन, समता (उचित समानता), उत्पादकता (वृद्धि या उच्च लाभ), पारदर्शिता और सभी तरह की सामाजिक गतिविधियों में जनवाद लागू करते हुए किसी भी प्रक्रिया में विद्यमान सभी विशेष अधिकारों और अतिरिक्त सुविधाओं को समाप्त किया जाए। इससे विश्व के 40 प्रतिशत वित्तीय संसाधनों की राजनीतिक और व्यापारिक भ्रष्टाचार के माध्यम से बर्बादी और गलत हाथों में जाने से रोका जा सकेगा, मानव अधिकारों और कानून के राज की अवहेलना तथा अपराधीकरण इत्यादि को समाप्त किया जा सकेगा। यह अनुमान है कि विशेष अधिकारों, एकाधिकार, भ्रष्टाचार, हिंसा और अपराध को समाप्त करके इतना धन बचाया जा सकता है जो दुनियां के 50 प्रतिशत वंचित लोगों (गरीबी की रेखा से नीचे लोगों, गरीब और सीमान्त किसानों, मध्यम वर्गीय बेरोजगारों और ऐसे ही अन्य हिस्सों के लोगों सहित) के लिए आवश्यक और वाजिब सामाजिक सुरक्षा के मूल अधिकार के रूप में गारण्टी देने के लिए काफी साबित हो सकता है। एक समतावादी व्यवस्था की स्थापना के लिए इसका मानना है कि मानव समाज के आय का अन्तर 1:5 के अनुपात में होना चाहिए।

(ग) पूंजी के प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त का मानना है कि कॉरपोरेट और सरकारी-नेतृत्व वाले दोनों मॉडलों का गैर इजारेदारीकरण और पुनर्गठित करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जाएँ :–

Scanned with CamScanner

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के सभी शेयरों को साधारण शेयर बनाया जाय। किसी को भी इसके 2 प्रतिशत से अधिक शेयर रखने की इजाजत नहीं दी जाए। हालांकि राज्य को किन्हीं विशेष मामलों में साधारण शेयर का एक चौथाई हिस्से का मालिक बनने की इजाजत दी जाए। प्रोत्साहक शेयरों (या ब्लॉक शेयरों) के नियमों (जो कॉरपोरेट क्षेत्र में अब प्रचलित है) को पूर्णतया रद्द किया जाए।

पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों के प्रबन्ध को पूरी तरह जनवादी बनाया जाए। इस संबंध में साधारण शेयर धारकों को प्रबन्ध मण्डल में दो तिहाई प्रतिनिधित्व दिया जाए। बाकी बचा एक तिहाई प्रतिनिधित्व उसी कम्पनी के संबंधित श्रमिकों के लिए आरक्षित रखा जाए। श्रमिकों के प्रतिनिधियों का चुनाव दोनों तरह के श्रमिकों (यानि मानसिक या शारीरिक श्रम करने वालों) में से किया जाए और उन्हें साधारण शेयरधारियों से आने वाले प्रतिनिधियों के समान ही अधिकार प्रदान हों।

ऐसा उद्यम जिसमें सरकार के एक चौथाई शेयर हों उसके प्रबन्ध मण्डल में सभी शेयरधारियों के प्रतिनिधित्व की निम्नलिखित हिस्सेदारी हो : साधारण शेयरधारी 50 प्रतिशत, श्रमिकों की भागीदारी 33 प्रतिशत और सरकारी भागीदारी 17 प्रतिशत हो।

प्रबन्ध मण्डल का चुनाव 3 वर्ष के लिए हो।

प्रकृति मानव केन्द्रित विकास मॉडल का उपरोक्त वर्णित जनवादी क्षेत्र वर्तमान में चल रहे एकाधिकारवादी कॉरपोरेट और राज्य-निर्देशित क्षेत्रों की तुलना में कहीं अधिक (दुगुना हो सकता है) उत्पादक होगा। इस पहले वाले क्षेत्र के (यानि, जनवादी क्षेत्र के) उच्च वृद्धि दर (या सम्पत्ति के उत्पादन की दर) का कारण इसके (यानि प्रकृत्ति-मानव केन्द्रित मॉडल के) अत्यधिक विकसित मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों में निहित होगा। इसके मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों में अत्यधिक विकास के कारण एक समतावादी आय जिसका अनुपात 1:5 के स्तर पर सुनिश्चित करने पर आधारित होगा और जीवन के सभी क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति के लिए सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार देने में निहित होगा, जनता और पर्यावरण इसकी मुख्य प्राथमिकताएँ बनाने का मूलभूत सिद्धान्त अख्तियार करने में निहित होगा, इसके द्वारा विश्व शान्ति और सुरक्षा को अपनाने में निहित होगा, जीवन के सभी स्थानीय से विश्वस्तरीय तक के आर्थिक, वित्तीय और व्यापारिक संस्थानों के क्षेत्रों और गांव से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ के स्तर तक जनता के सशक्तिकरण (खास करके महिलाओं, मजदूरों एवं वैज्ञानिकों-तकनीशियनों) की राजनीति में निहित है, इसके वास्तविक और तर्कसंगत अर्थशास्त्र और इसकी मानवीय एंव पर्यावरणीय मूल्यों से ओतप्रोत संस्कृति में निहित है।

(घ) सरकारी-नेतृत्व वाले क्षेत्र की अव्यवहारिकता को भूतवपूर्व सेवियत संघ के पतन से और विश्व में भूतपूर्व समाजवादी देशों द्वारा इस मॉडल को रद्द करने से

Scanned with CamScanner

देखा जा सकता है। कॉरपोरेट क्षेत्र काअप्रभावी होना निरन्तर बढ़ रही असमानता, गरीबी, भूखमरी, बेरोजगारी, बेघरबारता और इन सबसे ऊपर विश्व भर में निरन्तर बढ़ रहे गैरटिकाऊ (अब यहाँ और तब वहाँ) पर्यावरणीय संकट से देखा जा सकता है।

पर्यावरणीय और मानवीय मसलों पर मानव समुदाय(या जनता) की बढ़ती भूमिका और माँग दर्शाती है कि मानव समाज किस दिशा में जा रहा है।

कॉरपोरेट क्षेत्र द्वारा हालिया अख्तियार किया सामाजिक जवाबदेही और नैतिक व्यवहार के दर्शन का उदाहरण भी कॉरपोरेट क्षेत्र से मुक्त व्यापार के मूलभूत सिद्धान्त के गैर-कारगर होने को दर्शाता है जो सिद्धान्त प्रत्येक आर्थिक विकास प्रक्रिया (जिसका एकमात्र उद्देश्य व्यक्तिगत लाभ को उच्चतम सीमा तक बढ़ाना है) में सामाजिक न्याय की उपेक्षा करता है।

(ड़) उदारीकरण, निजीकरण और पुनरसंरचना की चौतरफा ज्ञात धारणाओं पर नजर डाले जो कि आवश्यक तौर पर कॉरपोरेट क्षेत्र की सेवा करती है, इनको भी प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल से संबंधित हर प्रक्रिया में जनता की सहकारी पहलकदमियों से प्रत्युत्तर दिया जा सकता है।

वैश्विक व्यापारिक और वित्तीय संस्थानों (यानि, विश्व व्यापार संगठन, आई.एम.एफ. और विश्व बैंक) के संबंध में उनको बंद करने की अतिवादी मांग के बजाए हमें तर्कसंगतं मांग रखनी चाहिए कि ये संस्थान अपने वर्तमान कॉरपोरेट विकास के उद्देश्य की जगह प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास के उद्देश्य को अपनाएं।

(यह उद्धरण नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट अंग्रेजी के अगस्त, 2003 तथा हिन्दी के अंक 182 से लिया गया है)

जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चा जेके समस्या के हल का खाका

I. दृष्टिकोण

हमारा पक्का विश्वास है कि जम्मू-कश्मीर का मसला सांस्कृतिक, नस्ली, राष्ट्रीय या धार्मिक नहीं बल्कि सामान्य तौर पर एक मानवीय मसला है। खास करके यह भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों के बीच त्रिपक्षीय मसला है।

उपरोक्त धारणा इस तथ्य पर आधारित है कि नई उभरी देशों की अन्तरनिर्भरता की विश्वव्यापी वास्तविकता में सभी राष्ट्रों के बीच विवादों को मानवीय मसले बना दिया है, जबकि सभी परम्परागत परिभाषित पहचानों-जैसे, नस्ली, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय और धार्मिक को या तो अप्रसांगिक बना दिया है या आंशिक प्रासंगिक बना दिया है। उदाहरण के लिए धर्म का सवाल भारत विभाजन से पहले अत्यधिक

Scanned with CamScanner

प्रभावी था वहाँ आज भारत व पाकिस्तान दोनों में यह अप्रांसगिक बन गया है। इस संबंध में भारत में हाल ही में हिन्दुत्व की राजनीति को रद्द कर दिया जाना और पाकिस्तान की सम्पूर्ण राजनीतिक प्रक्रिया में सभी प्रकार की साम्प्रदायिक पार्टियों की अप्रासंगिकता इसका ठोस प्रमाण है। हालिया अमेरिका की परम्परागत सैनिक एकाधिकारवाद के रद्द होने से जाहिर होता है कि विश्वव्यापी व्यवस्था की एक नई प्रक्रिया का प्रादुर्भाव हो रहा है।

सामान्य तौर पर जम्मू-कश्मीर के मसले की मानवीय प्रकृति और खासतौर पर इसके त्रिपक्षीय चरित्र के तहत इसका एक वास्तविक, तर्कसंगत और न्यायिक हल निकालने के लिए संबंधित तीनों पक्षों (यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू-कश्मीर के लोगों) के बीच उचित विचार विमर्श के बाद निम्नलिखित तीन एकीकृत कदम उठाए जाने चाहिए।

(अ) विवादित मसला मानने वाले सभी ग्रुपों के बीच एक व्यापक सहमति बनाने के लिए

जम्मू-कश्मीर को विवादित मसला मानने वाले और इसका न्यायिक और तर्कसंगत आधार पर हल स्वीकार करने वाले (आपसी लक्ष्य भिन्नता के बावजूद) सभी ग्रुपों (हर्रियत कान्फ्रेंस के दो धड़ों सहित) से विस्तृत संयुक्त मोर्चा बनाने और अपना कार्य पुरा करने के लिए हर कोशिश करने की अपील करना।

(ब) जम्मू-कश्मीर और खास करके घाटी में सामान्य हालात बहाल करने के लिए

(क) खाड़कूपन के संबंध में भारत द्वारा एकतरफा युद्ध विराम करना।

(ख) जम्मू-कश्मीर में सभी राजनीतिक कैदियों को रिहा करना।

(ग) जम्मू-कश्मीर में सभी ताकतों द्वारा और खास करके भारत द्वारा सभी मानव अधिकारों के हनन को रोकना।

(घ) कश्मीर घाटी में प्रयुक्त भारतीय बलों के एक भाग को वापिस बुलाना।

(ड़) तीनों पक्षों (यानि भारत, पाकिस्तान और खाड़कू ग्रुपों) द्वारा किए जा रहे मानवाधिकार हनन की शिकायतों की दोनों देशों की सहमति से नियुक्त भारत-पाक आयोग से जाँच करवाना और सभी पीड़ितों के लिए उचित मुआवजे की उससे सिफारिश करवाना। पीड़ितों की हत्या वाले मामलों में उनके परिवारों को संबंधित हननकर्ता पक्ष या आक्रमणकारी से समूचित मुआवजा दिलवाना। खाड़कूओं द्वारा किए गए मानवाधिकार हनन के मामलों में पीड़ितों को भारत और पाकिस्तान दोनों द्वारा मिल कर मुआवजा दिया जाए।

(स) भारत-पाक संबंधों में सामान्य स्थिति बहाल करने के लिए

(क) वर्तमान भारत-पाक युद्ध विराम को आगे बढ़ाना।

Scanned with CamScanner

(ख) दोनों देशों के बलों को युद्ध विराम रेखा से एक किलोमीटर पीछे कर लेना।

(ग) दोनों देशों के सैनिक बलों के दस्तों द्वारा संयुक्त सीमा निगरानी करना।

(घ) तीन समझौतों-सियाचीन, वुलर बैराज और सर क्रीक पर हस्ताक्षर करना, जिन पर भारत व पाकिस्तान के बीच लगभग 5 वर्ष पहले ही प्रारम्भिक सहमति हो चुकी है।

(ङ) भारत व पाकिस्तान के बीच तथा जम्मू-कश्मीर व आजाद कश्मीर के बीच बन्द पड़े कुछ रास्तों को खोलना। जैसे

(1) मुन्नाबाव-खोखरापार।

(2) फाजिल्का और इसके सामने।

(3) अमृतसर-लाहौर (जो खुल चुका है)।

(4) पूँछ-पलन्दरी (वाया रावलकोट)।

(5) जम्मू-सियालकोट (वाया सुचेतगढ़)

(6) श्रीनगर-मुज्जफराबाद

(7) पूँछी-उड़ी सड़क वाया हाजी पीर।

(8) कारगिल-अस्कार्डू सड़क।

(च) सीमा पर खाली पड़े सम्पूर्ण क्षेत्र में भारत-पाक दोस्ती के पार्क और व्यापार केन्द्र बनाए जाएँ।

(छ) सियाचीन पहाड़ी के खाली क्षेत्र में एक संयुक्त भारत-पाक वैज्ञानिक अनुसंधान केन्द्र की स्थापना की जाए।

II. जम्मू-कश्मीर समस्या के लिए ढंग-तरीके और आधारभूत मान्यताएँ निश्चित करना

(क) भारत-पाक युद्धवर्जन संधि पर हस्ताक्षर करते हुए सभी सैनिक रूपों को रद्द करना और शान्तिपूर्ण रास्ता अख्तियार करना।

(ख) विवाद में शामिल तीनों राज्यों-यानि, भारत, पाकिस्तान और जम्मू कश्मीर की एकता और अखण्डता को कायम रखना।

(ग) सभी साम्प्रदायिक और फूटग्रस्त प्रस्तावों को रद्द करना।

(घ) जम्मू-कश्मीर भारत का अभिन्न अंग है या पाकिस्तान की शाहरग (श्वास नली) है, जैसी सभी पुरानी धारणाओं से मुक्ति पाना।

(ड़) भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों का समान आनुवांशिक कोड (यानि, एक वंश के लोग) है, इस बात को ध्यान में रखा जाए।

(च) दोनों देशों के लोगों को वर्तमान दौर में गरीबी, बेरोजगारी, अशिक्षा, इत्यादि समान समस्याओं से सामना है, इस बात को मद्देनजर रखा जाए।

Scanned with CamScanner

(छ) और भारत, पाकिस्तान व जम्मू-कश्मीर के लोगों के साँझे भविष्य के परिप्रेक्ष्य को अख्तियार किया जाए।

III. एक मानवीय प्रस्ताव

उपरोक्त ढंग, तरीकों और मान्यताओं से चलते हुए तीनों संबंधित पक्षों के सामने सबसे महत्वपूर्ण कार्य यह है कि जेके समस्या पर एक समझौताकारी हल निकाला जाए। एक ऐसा हल जो संबंधित तीनों पक्षों के हितो और आकांक्षाओं में मेल बैठाता हो और उनके अपने-अपने राष्ट्रीय सम्मान की रक्षा करता हो तथा उनकी सम्पन्नता के लिए भविष्य के द्वार खोलता हो।

हमारी तरफ से हम निम्नलिखित तीन सूत्री मानवतावादी हल प्रस्तावित करते हैं। हमारे प्रस्ताव है :

(क) कि जम्मू-कश्मीर की रक्षा और विदेश मामलों को भारत और पाकिस्तान द्वारा संयुक्त रूप से या भारत-पाक सहराज्य के माध्यम से संचालित किया जाए।

(ख) कि जम्मू-कश्मीर राज्य एक स्वतन्त्र राज्य हो जिसको रक्षा और विदेश मामलों (जिनको भारत-पाक सहराज्य द्वारा चलाया जाए) के अलावा सभी मामलों में सम्प्रभुसता हासिल हो और

(ग) कि जम्मू-कश्मीर में सभी नस्ली समुदायों को अधिकतम सम्भव स्वायत्तता दी जाए।

जेके समस्या के त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चा
आर पी सर्राफ, फोन 0191-2535354 (पीपी)
एम आर कुरैशी, फोन-0191-2530001
ए एस राथर, फोन-0191-2578989
E-mail: saraf_rp @rediffmail.com

सही व गलत में भेद करने का सवाल

I

इतिहास दर्शाता है कि मनुष्य अपने उद्‌भव से ही प्रत्येक घटनाक्रम (प्राकृतिक और सामाजिक) से संबधित उसके सिद्धान्त (यानि उसके गुण, चरित्र या प्रकृति) व्यवहार और संगठन से बर्ताव के लिए सही और गलत में भेद करने के उसूल को अपनाकर ही विकसित हुआ है और अपना जीवन बसर करता रहा है। मानवीय जीवन में कोई भी क्षण (यानि सामाजिक गतिविधि या भोजन करने और यहाँ तक कि आराम करने की व्यक्तिगत गतिविधि के समय भी) ऐसा नहीं बीतता जब मानव मात्र को इस सवाल से पाला नहीं पड़ता है।

Scanned with CamScanner

II

इतिहास आगे दर्शाता है कि प्रत्येक घटनाक्रम की तरह सही और गलत में भेद करने का सवाल लगातार बदलता रहा है। इस प्रकार, इतिहास की विभिन्न सामाजिक मंजिलों में गलत व सही में पहचान करने के लिए भिन्न-भिन्न तरह के विचार मौजूद रहे हैं।

उदाहरण के लिए वर्तमान में चल रही पूंजीवादी मंजिल में हम पांच किस्म के मूलभूत विचारों का प्रचलन देख रहे हैं। जिनमें से प्रत्येक हमारे समय की सच्चाई का प्रतिनिधित्व करने का दावा करते हुए अपने से भिन्न विरोधी विचारों को झूठा साबित करता है। ये पांच किस्मे हैं–1. कारपोरेट, 2. कम्युनिष्ट, 3. धार्मिक रूढ़ीवादी, 4. राजनीतिक और आर्थिक रूढ़ीवादी और 5. स्वतंत्र विचार जो किसी विचाराधारा से जुड़े हुए नहीं हैं।

कारपोरेट सिद्धान्त कहता है कि सही व गलत के बीच भेद करने में निर्णायक पहलू पूंजी है। इसके मुताबिक पूंजी की वृद्धि ही विकास, सम्पन्नता और उन्नति को दर्शाती है और कि पूंजी की अधिकतम वृद्धि निजी मिल्कियत और स्वतंत्र राजनीतिक प्रतियोगिता से ही हासिल की जा सकती है।

कम्युनिष्ट सिद्धान्त भी मानता है कि लोगों का विकास, सम्पन्नता और उन्नति नापने का पैमाना पूंजी वृद्धि है। यह आगे कहता है कि राजनीतिक सत्ता पर कम्युनिष्ट पार्टी का एकाधिकार और उत्पादन के साधनों पर राज्य का एकाधिकार उच्च पूंजी वृद्धि हासिल करने की पूर्व शर्त है।

धार्मिक रूढ़ीवादी भी पूंजी वृद्धि के सिद्धान्त को सामाजिक विकास के आधार के तौर पर पेश करते हैं। परन्तु उनके अनुसार पूंजी-निर्माण में वृद्धि केवल उनके अपने-अपने धार्मिक रूढ़ीवादी विश्वासों के रास्ते पर चलकर हासिल की जा सकती है।

आर्थिक रूढ़ीवादी जैसे निजीकरण, उदारीकरण और पुनर्गठन के समर्थकों का मानना है कि अधिकतम पूंजी वृद्धि केवल उनकी धारणाओं को अपनाने से ही हो सकती है, जबकि राष्ट्रीयकरण, सरकारी मिल्कियत या सार्वजनिक क्षेत्र के समर्थक दावा करते हैं कि केवल उनका सिद्धान्त अपनाकर ही उच्चत्तम पूंजी-उत्पादन हासिल किया जा सकता है।

स्वतंत्र विचारक, हालांकि अधिकतम पूंजी के विचार को उच्च प्राथमिकता देते हैं। परन्तु वे गढ़मढ़ धारणाओं का जंगल खड़ा करते हैं। जिनसे कहीं नहीं पहुँचा जा सकता।

उपरोक्त वर्णित सिद्धान्त हालांकि भिन्न-भिन्न रास्ते सुझाते हैं। परन्तु मूल तौर पर सभी सहमत हैं कि पूंजी ही उन सबका साझा उद्देश्य है, यानि वर्तमान समाज में गलत व सही की पहचान के लिए उन सबका परिभाषित मूल्य एक है।

Scanned with CamScanner

पूंजी के सिद्धान्त को सही व गलत के निर्णय के लिए फैसलाकून पहलू मानने के ठीक उलट हालिया उभरा प्रकृति-मानव केन्द्रित सिद्धान्त मानता है कि उनकी पूंजी (यानि पैसा या धन-सम्पत्ति) केवल विनिमय का माध्यम मात्र है और यह समाज में किसी बहुमूल्य चीज का प्रतिनिधित्व नहीं करती है। इस सिद्धान्त के अनुसार केवल मानवीय और पर्यावरणीय संसाधन समाज में प्रत्येक चीज के अस्तित्व और विकास के लिए दो आधारभूत पहलू हैं। इन दो पहलूओं के अलावा समाज में किसी चीज (धन-सम्पत्ति, पैसा या अन्य कोई चीज) का कोई मूल्य नहीं है।

III

पूंजीवादी युग में पहले मानव समाज सामंती व्यवस्था से चरित्रित था जो हजारों साल तक चली और जिसमें बड़ी संख्या मे छोटे-बड़े सामंती राज्यों का अस्तित्व रहा और जहां प्रत्येक राज्य एक राजा के द्वारा शासित था। राजशाही का अद्वितीय लक्षण जिसे विभिन्न धर्मों में अपनी साँझी धारणा के तहत उभारा। वह यह था कि राजा ईश्वर का व्यक्तिगत प्रतिनिधि है। इसलिए वह लोगों पर राज करने का अधिकारी है (यह राजाओं का दैविक अधिकार का सिद्धान्त कहलाता है)। विभिन्न किस्मों के धर्मों के बीच भारी दुश्मनी के बावजूद सही व गलत को पहचानने के लिए उनका परिभाषित सांझा बिन्दू राजा ही था। राजा के प्रति अत्यधिक राजभक्ति प्रत्येक धर्म का आम उद्देश्य था, जबकि उसका विरोध करना पाप और अपराध था।

IV

सामन्ती युग से पहले विश्वभर में मानव समाज की पद्धति कबीलावाद थी। इस पद्धति के तहत कबीले के प्रति वफादारी सही व गलत की पहचान का मापदण्ड थी। कबीले और उसके मुखिया के प्रति किसी भी तरह की गैर-वफादारी को अनैतिक और गैर-कानूनी व्यवहार माना जाता था।

V

और पीछे जाते हुए हम गण समाज की तरफ आते हैं जो कई खून के रिश्ते वाले परिवारों (जो संस्कृत में गण-गौत्र कहलाते हैं) से गठित होता था। गण की सामाजिक संरचना में गण के सभी सदस्यों को सभी मामलों में बराबरी के अधिकार थे तथा जिसमें साथ ही साथ गण के नेता को अन्तिम निर्णय करने का अधिकार प्राप्त था। जब कभी विरोधी गण के सदस्य नजर आते या पकड़े जाते तो उनके साथ दुश्मन जैसा बर्ताव किया जाता और उन्हें निर्दयता से कत्ल कर दिया जाता था। गण सामाजिक संरचना लाखों साल तक चलती रही। गण समाज में गलत व सही के बीच फैसला करने का परिभाषित उसूल सम्पूर्ण गण के सांझे भले और सम्पन्नता के लिए काम करना था जबकि इस उसूल की अवहेलना करना अपराध बनता था।

Scanned with CamScanner

VI

इसके प्रारम्भिक भूतकाल की तरफ पीछे जाते हैं तो हम पाते हैं कि जब मानव घुमक्कड़ था और मानवीय झुण्ड (जो नर और नारी के मानवीय समूह से बने थे और अनुवंशीय और यौन संबंधों से बंधे थे जो आगे जाकर सामाजिक संरचना में विकसित हुए जिन्हें परिवार कहा जाता है) समस्त पृथ्वी पर अपनी प्रारम्भिक सामाजिक संरचना में गठित हो रहा था, उस समय सही व गलत के बीच भेद करने का मानवीय उसूल यह था कि संबंधित मानव झुण्ड के हितों को आगे बढ़ाएं और उनकी रक्षा करें वही सही है, जिसमें इसके प्रत्येक सदस्य के 3 आधारभूत जैविक आवेगों को पूरा करना भी शामिल था।

VII

मानवीय समाज की विभिन्न मंजिलों यानी सामन्ती, पूंजीवादी इत्यादि में सही और गलत की पहचान के विभिन्न उसूलों पर दृष्टिपात दर्शाता है कि ये उसूल मुख्य तौर पर अपने समय के सम्पूर्ण समाज के भले (यानी इसकी निश्चित सामाजिक व्यवस्था जिसे प्राचीन संस्कृत साहित्य में राज्य धर्म कहा गया) के लिए थे। इन्होंने उस समाज के प्रत्येक व्यक्तिगत सदस्य की सम्पूर्ण आधारभूत जैविक आवश्यकताओं की सेवा की– यानि (क) किसी भी खतरे से जीवन की सुरक्षा के आधारभूत जैविक मानवीय आवश्यकता को पूरा करना, (ख) उपलब्ध आवश्यक भौतिक चीजों यानि भोजन, मकान, कपड़े इत्यादि के माध्यम से शारीरिक आवश्यकताओं और साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक धारणाओं यानि सामाजिक पहचान, न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारा इत्यादि के माध्यम से मानसिक आवश्यकताओं को पूरा करके इस आधारभूत जैविक मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करना, (ग) और सह यौन जीवन के कानूनी और नैतिक मानदण्डों के माध्यम से आधारभूत जैविक मानवीय यौन आवश्यता को पूरा करना।

यह सुस्पष्ट है कि सही व गलत के बीच पहचान करने के लिए मनुष्य की 3.आधारभूत जैविक आवश्यकताओं में से किसी ने भी कभी भी परिभाषित सिद्धान्त की भूमिका अख्तियार नहीं की है।

VIII

किसी विशिष्ट समाज से संबंधित गलत और सही में भेद करने का मूलभूत विचार कोई साधारण धारणा नहीं है। बल्कि यह उस सामाजिक समुदाय के लिए सर्वोच्च महत्व की धारणा है। यह इसलिए है कि इस प्रकार के एक सामाजिक रचनातंत्र की सम्पूर्ण संरचना इस सिद्धान्त पर आधारित, निर्देशित, कार्यान्वित और संगठित होती है। दूसरे शब्दों में किसी भी रचनातंत्र का सम्पूर्ण राजनीतिक क्षेत्र, आर्थिक तंत्र और सांस्कृतिक परिमण्डल का आधार सही और गलत में भेद के अपने संबंधित मूलभूत विचार से निर्मित होता है। इसे विद्यमान पूंजीवादी कॉरपोरेट समाज

Scanned with CamScanner

के मूलभूत सिद्धान्त और व्यवहार से आसानी से देखा जा सकता है। जहाँ हमारी सम्पूर्ण राजनीति (सम्पूर्ण संविधान, कानूनों एवं नियमों से गठित) समस्त आर्थिकता (निर्माण, सेवा, कृषि आदि जैसे सभी क्षेत्रों से गठित), तथा सम्पूर्ण संस्कृति (विचार, रिवाज, कला, शिक्षा, विज्ञान, तकनिकी, खोज, आचरण, शिष्टाचार आदि) पूंजी को जीवन-रेखा मानने वाले मूलभूत सिद्धान्त पर आधारित है और पूंजी के खिलाफ वाली हर चीज गलत है। हमारे विद्यमान कॉरपोरेट मॉडल के न्याय, उदारता, समानता, भ्रातृत्व और विकास का सम्पूर्ण सिद्धान्त और व्यवहार सही और गलत में भेद के इस मूलभूत विचार से निर्देशित है।

अर्थात् कॉरपोरेट पूंजी मालिक और इसके राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक गुर्गे प्रत्येक देश में आम आदमी की पीठ पर कैसे और क्यों सवार हैं। जबकि आम-साधारण जनता उनके (कॉरपोरेट के) असीमित दमन और शोषण के जुए के नीचे कराह रही है।

सही और गलत में भेद करने वाले विभिन्न परिभाषित विचारों की इसी तरह की भूमिका उनके समकालीन ऐतिहासिक समय में रही है।

IX

सही और गलत में भेद के कॉरपोरेट मूलभूत विचार से असाधारण मत भिन्नता रखते हुए प्रकृति-मानव केन्द्रित मूलभूत विचार मानता है कि हर प्रकार के न्याय राजनीतिक, कानूनी, आर्थिक और नैतिक इत्यादि-और स्वतंत्रता, समानता और भ्रातृत्व के मूलभूत मानवीय अधिकार इस मूलभूत सिद्धान्त पर आधारित होने चाहिये जो प्राकृतिक और मानवीय घटनाक्रम को मानव जीवन का स्नायु केन्द्र समझे तथा प्राकृतिक और मानवीय घटनाक्रम के खिलाफ सभी गतिविधियों को अनैतिक और घृणित माने।

— × — × —

(जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)

वर्तमान वैश्विक बेरोजगारी
मानव समुदाय के लिए एक भयावह समस्या
इसका कारण एवं निवारण

I

बेरोजगारी आज दुनिया की सबसे गंभीर समस्याओं (जैसे, ग्लोबल वार्मिंग की बिगड़ती स्थिति, पानी की भारी कमी, गरीब-अमीर के बीच बढ़ती खाई, अद्वितीय गरीबी इत्यादि) में से एक है जो अब खतरनाक रफ्तार और स्तर हासिल कर चुकी है, ऐसा इसके इतिहास में कोई उदाहरण नहीं मिलता। शायद विश्व ने रोजगार के ऐसे खराब हालात का मुश्किल से ही कभी सामना किया है जैसा कि आज कर रहा है।

Scanned with CamScanner

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आई. एल. ओ.) की 2003-2004 की रिपोर्ट के अनुसार मानव समुदाय के सामने आज बेरोजगारी एक अत्यन्त भयावह वैश्विक समस्या है।

2003 आई. एल. ओ. रिपोर्ट दर्शाती है कि सन् 2003 में वैश्विक बेरोजगारी लगातार बढ़ती गई है जो पुरुष और महिलाओं में मिलाकर 185.9 मिलियन (यानि सम्पूर्ण श्रमिक संख्या का 6.2 प्रतिशत) तक पहुंच गई है। जबकि बाद के आधे साल में आर्थिकता में कुछ सुधार हुआ है। परन्तु बेरोजगारी ने उच्चत्तम आँकड़े का रिकार्ड कायम किया है। युवाओं में यह बेरोजगारी तेजी से बढ़ी है। दुनिया के बेराजगारों में लगभग 108.1 मिलियन पुरुष तथा 77.8 मिलियन महिलाएं हैं।

युवाओं के लिए वैश्विक बेरोजगारी का रुझान 2004 में एक नया विश्लेषण आई. एल. ओ. के रोजगार रणनीति विभाग द्वारा तैयार किया गया है। जिसके अनुसार 15 से 24 वर्ष की उम्र के युवा दुनियां में बेरोजगारों का करीब आधा हिस्सा हैं। वास्तव में युवा बेरोजगारी विश्व में व्यापक तौर पर पिछले दशक में आसमान छूने लगी है जो करीब 88 मिलियन तक पहुंच गई है।

रिपोर्ट में पाया गया है कि 15 से 64 वर्ष तक की आयु वाले काम करने लायक आबादी का युवा 25 प्रतिशत हिस्सा है जो सन् 2003 में दुनियाभर की बेरोजगार जनसंख्या 186 मिलियन का 47 प्रतिशत है।

युवाओं की भारी संख्या में बेरोजगार होने के अलावा भी जो युवा रोजगार में लगे हैं उनकी स्थिति भी कोई बेहतर नहीं है। 550 मिलियन दुनिया के कामगारों में 130 मिलियन युवा कामगार हैं। जो काम तो करते हैं परन्तु वे स्वयं और उनके परिवार 1 डालर प्रतिदिन की गरीबी की रेखा के दायरे से ऊपर नहीं उठ पाते हैं।

रिपोर्ट के अनुसार सन् 2003 में दुनियाभर में युवा बेरोजगारी की दर 14.4 प्रतिशत रही है। जिसमें सबसे ऊँची दर पश्चिमी एशिया एवम उत्तरी अफ्रीका के देशों की 25.6 प्रतिशत, सब-सहारा अफ्रीका की 21 प्रतिशत, संक्रमणकालीन आर्थिकताओं वाले देशों की 18.6 प्रतिशत, लेटिन अमेरिका एवं कैरीबियन देशों की 16.6 प्रतिशत, दक्षिणी-पूर्वी एशिया की 16.4 प्रतिशत, दक्षिण एशिया की 13.9 प्रतिशत तथा औद्योगिक देशों की 13.4 प्रतिशत एवं पूर्वी एशिया की 7 प्रतिशत बेरोजगारी रही है।

केवल औद्योगिक आर्थिकता वाले क्षेत्र में युवाओं की बेरोजगारी में दर्शनीय गिरावट देखी गई है। 1993 में यह बेरोजगारी 15.4 प्रतिशत थी जो 2003 में 13.4 प्रतिशत हो गई है।

दुनिया के 85 प्रतिशत युवा विकासशील देशों में रहते हैं, जहाँ व्यस्कों की तुलना में युवा 3.8 गुणा अधिक बेरोजगारी के शिकार हैं जबकि औद्योगिक देशों में यह बेरोजगारी 2.3 गुणा है।

Scanned with CamScanner

इस रिपोर्ट के अनुसार ये बेरोजगार युवा अस्तित्व के लिए संघर्षरत हैं, अनौपचारिक आर्थिकताओं में प्राय: युवा असन्तोषजनक हालात में कार्य करने को विवश हैं। जिन युवाओं को काम मिल भी जाता है उन्हें प्राय: ज्यादा वक्त, अनौपचारिक अनुबंध के तहत, कम तनख्वाह एवम् नाम मात्र की सामाजिक सुरक्षा या बिलकुल सुरक्षा नहीं होने के हालात में काम करना पड़ता है। इस प्रकार युवाओं की निर्भरता अपने परिवारों पर बढ़ती जा रही है तथा गैर कानूनी गतिविधियों में धकेले जाने की संभावना प्रबल हो गई है।

रिपोर्ट दर्शाती है कि युवाओं की संख्या में तेजी से हो रही बढ़ोतरी के कारण रोजगार देने वाली आर्थिक गतिविधियों की यह क्षमता नहीं रह गई है कि वे सब को काम दे सके।

पिछले दशक में युवाओं की जनसंख्या में वृद्धि दर 10.5 प्रतिशत रही है तथा 2003 में उनकी जनसंख्या 1 अरब 10 करोड़ हो गई। जबकि युवाओं के लिए यह आर्थिकता मात्र 0.2 प्रतिशत की दर से ही रोजगार उपलब्ध करा सकी है यद्यपि रोजगार के 526 मिलियन अवसर उपलब्ध हो रहे हैं।

युवा बेरोजगारी रिकार्ड स्तर तक पहुंच गई है और आसमान को छू रही है जो यह चेतावनी दे रही है कि इससे दुनिया की आर्थिकता पिछड़ती जा रही है। इस पर संयुक्त राष्ट्र संघ ने आव्हान किया है कि इस समस्या से निपटने के लिए लक्ष्यबद्ध एवम् सामूहिक कदम उठाए जाएं।

अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के डायरेक्टर जनरल जुआन सोमाविया ने कहा, ''हम अत्यधिक शिक्षित युवा पीढ़ी के एक महत्वपूर्ण भाग की ऊर्जा और बुद्धि को बर्बाद कर रहे हैं। जबकि ऐसा विश्व ने पहले कभी नहीं किया।संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम विकास लक्ष्य को हासिल करने के लिए युवाओं के रोजगार पाने और अच्छे कार्य कर पाने की संभावनाओं को बढ़ाना पूर्णतया दुसाध्य है।''

संयुक्त राष्ट्र मिलेनियम सम्मेलन 2000 द्वारा अत्यधिक गरीबी और भूख को आधा कम करने तथा बच्चों व मातृत्व मृत्युदर को कम करने सहित कुछ विशेष लक्ष्य सन् 2015 तक हासिल करने का आव्हान् किया है।

युवाओं के लिए ग्लोबल रोजगार रुझान 2004 की आई. एल. ओ. रिपोर्ट कहती है कि विश्व के युवाओं की बेरोजगारी दर को आधा करने के लिए कम से कम 2.2 ट्रिलियन (22 खरब) धन की आवश्यकता है। यह सन् 2003 के विश्व सकल घरेलू उत्पाद (विश्व की जी.डी.पी.) का लगभग 4 प्रतिशत भाग है।

आई. एल. ओ. की सन् 2003 की रिपोर्ट के अनुसार विश्व के विभिन्न भागों में बेरोजगारी की दर नीचे टेबल के अनुसार है–

Scanned with CamScanner

बेरोजगारी दर प्रतिशत में (सन् 1990 से 2002 के बीच)

क्र. सं.	क्षेत्र/वर्ष	1990	1995	2000	2002
1.	लेटिनअमेरिका और कैरीबियन	6.5	8.5	9.0	9.9
2.	पूर्वी एशिया	–	3.0	3.2	4.0
3.	दक्षिण-पूर्व एशिया	3.0	4.2	6.0	6.8
4.	दक्षिण एशिया	3.8	3.0	3.8	3.8
5.	यूरोपिय संघ	8.0	11.0	7.0	7.0
6.	अमेरिका	5.0	5.0	4.0	5.2
7.	जापान	2.1	3.0	4.5	5.3
8.	सब-सहारा अफ्रीका के नीचे	–	–	13.0	14.8
9.	मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ्रीका	–	–	17.0	18.0

बिजनैस स्टेन्डर्ड 17/3/2004

भारत के संबंध में सुपरिचित सांख्यिकीय आँकड़े दर्शाते हैं कि बेरोजगारी वृद्धि की समस्या अत्यधिक गंभीर है।

राष्ट्रीय सैम्पल सर्वे की दो क्रमागत रिपोर्टों के अनुसार बेरोजगारी की दर 5.99 प्रतिशत से 7.32 प्रतिशत के स्तर तक पहुंच गई है और इससे कुल बेरोजगारों की संख्या 20.13 मिलियन से बढ़कर 26.58 मिलियन हो गई।

प्रतिवर्ष लगभग 8 मिलियन (80 लाख) भारतीय श्रम शक्ति (रोजगार लायक) में दाखिल होते हैं। परन्तु पिछले सन् 1993-2000 के बीच प्रतिवर्ष औसतन मात्र 3.6 मिलियन (36लाख) नये रोजगारों का सृजन होता रहा है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के आधार वर्ष 2002 में बेरोजगारी के हालात दर्शाते हैं कि बेरोजगारी के बैकलॉग (संचय) को भरने के लिए 35 मिलियन रोजगार अवसरों के सृजन की आवश्यकता है। सन् 2002-07 के बीच 45.56 मिलियन लोगों के लिए रोजगार अवसरों का सृजन करने की आवश्यकता है।

विजारिया का अध्ययन 'भारत में युवाओं के बीच बेरोजगारी' दर्शाता है कि भारत की सम्पूर्ण आबादी की तुलना में युवाओं के बीच बेरोजगारी अधिक है और बढ़ती अधिसंख्या में युवा लोग भारत की श्रम शक्ति में शामिल हो रहे हैं। आज बेरोजगारी की अत्यधिक चुनौतीपूर्ण समस्या शिक्षित बेरोजगारी के रूप में मौजूद है।

From Rediff com home news Business website

भारत के सरकारी रोजगार कार्यालयों में सन् 2000 में ऐसे 4 करोड़ नौजवानों के नाम दर्ज थे जो रोजगार चाहते थे।

सन् 1988 से 1999 के दौरान रोजगार वृद्धि दर 6.68 प्रतिशत रही और इस अवधि में पंजीकृत रोजगार खोजने वालों की दर 22.56 प्रतिशत रही।

Scanned with CamScanner

आर्थिक सर्वेक्षण 2002-2003 में भारत सरकार ने स्वीकृत किया है कि 1988-94 के दौरान रोजगार वृद्धि की दर प्रतिवर्ष 2.7 प्रतिशत थी, जबकि 1994-2000 के बीच यह वृद्धि केवल 1.07 प्रतिशत रह गई, जिसका अर्थ है कि प्रतिवर्ष वृद्धि दर में कमी 1.63 प्रतिशत की हो गई। इसी स्रोत के मुताबिक 1993-94 के दौरान बेरोजगारी की दर 5.99 प्रतिशत थी। जबकि 1999-2000 के वक्त यह बरोजगारी दर 7.32 प्रतिशत तक बढ़ गई। और यह वही समय था जब नई आर्थिक नीतियों के हर माध्यम से आर्थिक वृद्धि हासिल करने के नारे लगाये जा रहे थे।

इसी सर्वेक्षण के मुताबिक यह भी साफ है कि बिहार के आर्थिक हालात भी बाकी भारत की तरह के हैं, जहाँ रोजगार वृद्धि की दर 1.59 प्रतिशत रही और बेरोजगारी की वृद्धि दर 7.32 प्रतिशत रही।

श्रम की उपलब्धता (बेरोजगारी) के संबंध में आंकड़े मुद्दे की केवल भयावह स्थिति को दर्शाते हैं। जहाँ देश की कुल आबादी का 61.8 प्रतिशत श्रम शक्ति हर वक्त काम के लिए तैयार है वहाँ बिहार में यह 57.3 प्रतिशत है। इस प्रकार बिहार और अखिल भारतीय स्तर पर 50 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या श्रम उपलब्ध करवाने के लिए तैयार खड़ी है, यानि बेरोजगारी की लाईन में खड़ी है।

देश भर में बेरोजगारी की निराशाजनक हालात को हालिया रेल्वे नौकरियों के समय हुए दंगा-फसादों ने साफ उद्घाटित किया है। रेल्वे में ग्रुप 'सी' और 'डी' के लिए परीक्षा ली गई। जिसमें 38000 नौकरियों के लिए 75 लाख आवेदक मौजूहुए हुए और इसी दौरान आसाम और महाराष्ट्र में हिंसा हुई। इन पदों के लिए जहाँ 12वीं पास मांगे गये थे। वहाँ आवेदकों में एम.बी.ए. किए हुए, स्नातक और स्नातकोत्तर, बी.टेक. किये हुए शामिल थे।

II

बेरोजगारी का कारण क्या है, इस सवाल को लेते हैं। इसका तात्कालिक कारण बाजार-निर्देशित कारपोरेट विकास मॉडल में निहित है। जिसका एकमात्र उद्देश्य अधिकतम लाभ कमाना है। जिसके लिए यह कारपोरेट मॉडल जहाँ तक सम्भव हो मानव श्रम से बचते हुए अत्यधिक विकसित तकनीक काम में लेता है। विकसित तकनीक भारी उत्पादन की क्षमता रखती है जो एक तरफ संसाधनों के अति उपयोग और दुरुपयोग से एवम् और अधिक अवशिष्ट (कूड़ा) पैदा करके प्राकृतिक पर्यावरण को प्रदूर्षित करती है और नुकसान पहुंचाती है वहीं दूसरी तरफ बहुसंख्यक श्रमिकों की छंटनी कर अमीरी-गरीबी में अमानवीय दूरी पैदा करती है तथा इस प्रकार मानव संसाधनों को नुकसान पहुंचाती है।

बेरोजगारी का अन्तिम मूल कारण कारपोरेट सामाजिक व्यवस्था की धन और सत्ता की दिशा में निहित है, जिससे लगातार पूँजी-मालिकों के हाथों में मुनाफे से धन का ढेर इकट्ठा होता जा रहा है जबकि श्रमिक और अन्य मेहनतकश लोगों को यह

Scanned with CamScanner

गरीब विरोधी कारपोरेट नीतियों के माध्यम से गरीबी में धकेलती जा रही है।

कारपोरेट सामाजिक व्यवस्था निम्न मूलभूत तत्वों से चरित्रित है, इनमें से प्रत्येक का नेतृत्व एवम् नियन्त्रण एक समय में एक कारपोरेट ग्रुप या उसकी प्रतिनिधि संस्था तथा दूसरे समय में अन्य कारपोरेट ग्रुप या उसकी प्रतिनिधि संस्था करती है।

1. राज्य का ढ़ांचा राजनीतिक दलों द्वारा नियन्त्रित और संचालित होता है। यद्यपि राजसत्ता पाने और राजसत्ता में बने रहने के लिए उनमें आपस में बहुत तीव्र संघर्ष होता है। परन्तु वे सब इस बुनियादी कारपोरेट सिद्धांत पर एकमत हैं कि कारपोरेट नजरिया और व्यवस्था मानव समुदाय के लिए सबसे अधिक बेहतर सामाजिक दृष्टिकोण एवम् प्रबन्ध का प्रतिनिधित्व करता है। ये सभी कारपोरेट समर्थक राजनीतिक पार्टियाँ अपने-अपने कारपोरेट समर्थकों द्वारा दिये गये धन के सहारे आपस में चुनावी मुहिम का संचालन करते हैं और चुनाव लड़ते हैं। प्रत्येक कारपोरेट राज्य अपने अधीन क्षेत्र के प्राकृतिक एवम् मानव संसाधनों पर चुनौतीहीन संवैधानिक एवम् विधिक नियन्त्रण रखता है।

2. आर्थिक ढांचा स्वयं कारपोरेट पूंजीपतियों द्वारा (बड़े व छोटे दोनों) सामूहिक तौर पर नियन्त्रित एवम् संचालित है। आर्थिक ढ़ांचे जिसे उत्पादन पद्धति भी कहते हैं, में उत्पादन क्षेत्र की सभी श्रेणियाँ शामिल हैं। वर्तमान कारपोरेट उत्पादन पद्धति आम तौर पर तीन मुख्य उत्पादन क्षेत्रों से गठित हैं, अर्थात्

(क) कृषि एवम् उससे संबंधित शाखाएँ

(ख) कारखाना एवम् उससे संबंधित अन्य व्यवसाय तथा

(ग). सेवाएँ और उससे संबंधित गतिविधियाँ ।

वर्तमान में सेवाक्षेत्र विशेषतौर पर सूचना तकनीकी शाखा वद्धि दर के नजरिए से अत्यधिक उत्पादक क्षेत्र होने से प्रथम स्थान पर है तथा इस प्रकार आर्थिक व्यवस्था में प्राथमिक स्थान रखता है।

3. सांस्कृतिक तौर पर विभिन्न सांस्कृतिक गतिविधयों का विशाल क्षेत्र कारपोरेट नियन्त्रण के तहत है। प्रत्येक सांस्कृतिक तत्व आज माल बन चुका है जिसे किसी कीमत पर खरीदा व बेचा जा सकता है। वर्तमान दृश्य एवम् लिखित मिडिया (जिसमें फिल्म और सिनेमा क्षेत्र शामिल है) आज मौजूदा कारपोरेट व्यवस्था के रक्षक हैं।

III

बेरोजगारी की समस्या के समाधान के बारे में यह आवश्यक है कि इस समस्या को तात्कालिक, दीर्घकालिक तथा व्यवस्थागत तीन तरफा दृष्टिकोण से हल किया जाए।

तात्कालिक रास्ता निम्न तीन माँगों पर आधारित होना चाहिए :–

(क) सभी गैर स्नातक तथा उससे नीचे वाले (अशिक्षित सहित) सभी बेरोजगारों को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2 डालर के हिसाब से मासिक भत्ता दिया जाए।

Scanned with CamScanner

(ख) सभी स्नातक व उससे ऊपर के बेरोजगारों को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 3 डालर के हिसाब से मासिक भत्ता दिया जाए।

(ग) सभी विशेषज्ञों एवम् व्यवसायियों को प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 4 डालर के हिसाब से मासिक भत्ता दिया जाए।

दीर्घकालीन रास्ता निम्न तीन क्षेत्रों को विकसित करने में निहित है। –

(क) पर्यावरण क्षेत्र जिसके हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता आदि घटक हैं।

(ख) मानव क्षेत्र जो सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवम् राजनीतिक आयाम लिए हुए हैं।

(ग) वैज्ञानिक एवम् तकनीकी क्षेत्र जो तमाम प्रकृति या ब्रह्माण्ड में अनुसंधान करने में लगा हुआ है।

व्यवस्थागत परिवर्तन विवश कर रहा है कि वर्तमान कारपोरेट व्यवस्था को एक नई प्रकृति-मानव केंद्रित व्यवस्था में बुनियादी तौर पर तब्दील किया जाए।

नई व्यवस्था के निम्न मुख्य बिन्दु हैं–

मानव समाज का प्रकृति-मानव केंद्रित मॉडल

1. मानव समाज के प्रकृति मानव केन्द्रित मॉडल का मानना है कि मानव समाज में पर्यावरण और मानव जाति दोनों बहुत ही मूल्यवान घटनाक्रम हैं। यह दोनों इसकी सामाजिक पूँजी (सर्वोच्च वस्तु) है, इन दोनों (यानि, पर्यावरणीय-मानवीय संसाधन) में वृद्धि से विकास, सम्पन्नता एवं प्रगति होती है तथा सोचने, कहने, करने और संगठित होने के लिए यह निर्देशक सिद्धान्त का कार्य करता है।

2. यह हर समय और जगह पर्यावरण (यानि, हवा, पानी, जमीन, जंगल, जैव-विविधता इत्यादि) संवर्धन के मूलभूत कार्य का मजबूती से समर्थन करता है।

3. यह प्रत्येक व्यक्ति के जैव-सामाजिक अस्तित्व के अधिकार को शुद्ध हवा, साफ पीने के पानी, पौष्टिक भोजन, घर, कपड़ा तथा मुफ्त स्वास्थ्य एवं शिक्षा के तौर पर सामाजिक सुरक्षा को मूल अधिकार के रूप में सुनिश्चित करने का समर्थक है।

4. यह आय में 1:5 के फर्क (यानि आय में अधिकतम 5 गुणा अन्तर) पर आधारित उचित समानता के मूलभूत मानवीय अधिकार का समर्थक है।

5. यह विश्व शान्ति का मजबूती से पक्षपोषण करता है और विश्व के सभी विवादों खासकरके जम्मू-कश्मीर, फिलीस्तीन और श्रीलंका इत्यादि के सीधे शांतिपूर्ण हल के मार्ग का समर्थक है। जम्मू कश्मीर के न्यायपूर्ण समाधान के लिए इस राज्य के सुरक्षा एवं विदेश महकमों को भारत-पाक सहराज्य के संयुक्त नियन्त्रण में सौंपा जाना चाहिए जबकि बाकी सभी मामलों (रक्षा और विदेश मामलों के अलावा) में जम्मू-कश्मीर स्वतंत्र होना चाहिये जबकि इसके नौ नश्ली क्षेत्रों में से प्रत्येक को

Scanned with CamScanner

अधिकतम संभव स्वायत्तता प्रदान की जाए। इसी प्रकार का न्यायपूर्ण समाधान इजराईल, फिलीस्तीन और जोर्डन के संबंध में भी कारगर होगा।

6. यह संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद के 5 स्थायी सदस्यों के वीटों पावर को समाप्त करते हुए विश्व व्यवस्था के पुनर्गठन करने एवं किसी मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए संयुक्त राष्ट्र की केन्द्रीय सभा में साधारण बहुमत के आधार पर फैसला लेने की सम्पूर्ण ताकत प्रदान करने की मांग करता है।

7. यह विश्व व्यापार संगठन, विश्व बैंक और अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष को उनके मुक्त बाजार परिप्रेक्ष्य की बजाए प्रकृति-मानव केन्द्रित परिप्रेक्ष्य के आधार पर पुनर्गठित करने तथा इनके विकास की रणनीति (जो पैसे और पैसे वालों की पक्षधर है) को प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास रणनीति बनाने की हिमायत करता है जिसमें मानवीय और पर्यावरणीय पहलु उच्च प्राथमिकता रखते हैं तथा जिन्हें पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जनता के नेतृत्ववाला जनवाद और चौतरफा पारदर्शिता के पांच उसूलों की बुनियाद पर पुनर्गठित किया जाता है।

8. यह सभी सामाजिक संस्थानों में महिलाओं को 50% प्रतिनिधित्व पक्का करके महिलाओं का सशक्तिकरण सुनिश्चित करने का समर्थक है।

9. यह खेती को सहकारिता के आधार पर सुसंगठित करने को प्रोत्साहित करता है तथा खेती से संबंधित सभी लोगों की जीविका को सुनिश्चित करने का समर्थक है।

10. यह श्रमिकों (शारीरिक और मानसिक दोनों) के सशक्तिकरण के लिए जोरदार आवाज उठाता है, जिसके अनुसार सभी संस्थानों, परियोजनाओं एवं कारखानों के प्रबंध में उनके (श्रमिकों के) एक तिहाई चुने हुए प्रतिनिधियों की भागीदारी सुनिश्चित की जाए।

11. यह सभी औद्योगिक और सेवा क्षेत्रों के विकेंद्रीकरण की वकालत करता है जिसके अनुसार कॉरपोरेट और राजकीय मोनोपोली नियन्त्रण समाप्त करते हुए एवं उन्हें साधारण शेयरधारकों (दो तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) तथा मजदूरों (एक तिहाई प्रतिनिधित्व के साथ) के द्वारा प्रबंधित किया जाए।

12. यह वित्त नियन्त्रण के लिए लोकतांत्रिक प्रबंध और नियन्त्रण को प्रस्तावित करता है। कॉरपोरेट क्षेत्र पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर एकाधिकारी कॉरपोरेट प्रबंधन एवं नियन्त्रण का पक्षधर है तो राजकीय क्षेत्र नौकरशाही प्रबन्धन एवं नियन्त्रण का समर्थक है। जबकि प्रकृति-मानव केन्द्रित विकास मॉडल पब्लिक लिमिटेड कम्पनियों पर स्थायी कॉरपोरेटरों की बजाए दो तिहाई आम शेयर धारकों से तथा एक तिहाई सदस्य मजदूरों से चुने हुए प्रतिनिधियों से गठित निर्वाचित संयुक्त कमेटियों का प्रबंधन एवं नियन्त्रण का हामी है। प्रोमोटर्स शेयरधारकों द्वारा बाजार दर के मुकाबले सस्ती दर पर खरीदे जाने वाले प्रोमोटर्स शेयर्स को खत्म करके कॉरपोरेट प्रबंध की मिल्कियत को समाप्त किया जाए।

Scanned with CamScanner

13. यह प्रत्येक सांसद को 2 करोड़ और प्रत्येक विधायक को लाखों रुपये अपने चुनावी क्षेत्र के विकास खर्च के लिए आवंटित करने के मौजूदा नियम को हटाकर विकास से संबंधित सारा धन निर्वाचित जन विकास समितियों (ग्रामसभा सहित और इसके ऊपर कोई नहीं) के जरिए खर्च करने को प्रोत्साहित करती है।

14. यह प्रत्येक देश में प्रकृति-मानव केन्द्रित दृष्टिकोण के आधार पर कॉरपोरेट पूँजीवादी निर्देशित संविधान तथा न्यायशास्त्र को पुनर्गठित करने का प्रस्ताव रखता है।

15. यह मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों के हितों की रक्षा एवं संवर्धन के मूलभूत सिद्धान्त का मजबूती से पक्षधर है। उपर्युक्त उसूल की किसी तरह से अवहेलना करने पर अपराधी को सुधारने के उद्देश्य से व्यवहार किया जाए जबकि अपराध की गंभीरता के अनुकूल दण्ड दिया जाए। दण्ड में मानवीय क्रूरता और मृत्युदण्ड के अलावा इतिहास में विद्यमान सभी तरह के मानवीय रूपों वाले दण्ड के प्रावधान शामिल हो सकते हैं।

16. इसका पक्का विश्वास है कि मानव समाज की सभी संघटक प्रक्रियाओं– यानि, पर्यावरणीय, मानवीय और वैज्ञानिक तकनीकी–पर लोगों का नियंत्रण होना चाहिए और उन्हीं द्वारा संचालित होना चाहिए।

17. यह गांव/वार्ड से राष्ट्रीय स्तर तक पाँच स्तरों पर सामाजिक जीवन के तीन पहलुओं-राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक के प्रबन्ध की शक्ति लोगों को देकर उनके सशक्तिकरण (या जनता के नेतृत्व वाला शासन) को प्रस्तावित करता है।

18. लोगों के सशक्तिकरण की प्रक्रिया चुनाव के तरीके से तय की जाए जो पूर्णतया स्वतंत्र हो और जहाँ प्रत्येक को उम्मीदवार के तौर पर भागीदारी करने का अधिकार है तथा मतदाता के रूप में अपनी राय जाहिर करने का अधिकार है। यह दलगत ढांचे को महत्व दिये बिना व्यक्ति के रूप में उम्मीदवार को (जो विधानसभा चुनाव के सिलसिले में 1000 और लोकसभा चुनाव के सिलसिले में 5000 मतदाताओं के हस्ताक्षर प्रस्तुत करें) चुनाव में सरकारी खर्च का नियम लाकर राज्य सत्ता पर भ्रष्ट और सत्ता-धन के लोभी राजनीतिक दलों के राजकीय एकाधिकार का खात्मा करने का पक्षधर है। सम्बन्धित मतदाताओं को वापिस बुलाने का अधिकार हो जिसके तहत किसी सभा सदस्य के मतदाताओं का 1/5 भाग अगर लिखित में पुनः चुनाव की मांग इस आधार पर करें कि उपर्युक्त सदस्य अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है।

19. राजनीतिक पहलू माँग करता है कि पाँचों स्तर पर (यानि, राष्ट्रीय, राज्य या क्षेत्रीय, जिला, ब्लॉक और गाँव)राजनीतिक सभा का गठन किया जाए जो लोकतान्त्रिक व्यवस्था पर कायम रहे तथा पूर्णतया लोकतान्त्रिक उसूलों, गतिविधियों और ढाँचे पर आधारित हो। ऐसा मॉडल निर्णय लेने में भी अधिकतम सम्भव लोक सशक्तिकरण के सिद्धान्त को लागू करना आवश्यक बना देता है।

Scanned with CamScanner

20. आर्थिक पहलू की आवश्यकता है कि एक तर्कसंगत और वास्तविक आर्थिकता के लिए पाँचों स्तर पर विकास सभाएँ स्थापित की जाएं जिसकी धारणाएँ, कानून एवं नियम पुर्वोक्त दो उच्चस्थ प्राथमिकताओं (यानि, पर्यावरणीय संवर्धन, उचित समानता, उत्पादकता, जन-नेतृत्वकारी लोकतन्त्र तथा चहुंमुखी पारदर्शिता) की रोशनी में बनाए जाएं। मनुष्य की जैव सामाजिक प्रकृति के मद्देनजर एडम स्मिथ का 'निजी हित' आधारित बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त तथा हर चीज का राज्य द्वारा राष्ट्रीयकरण करने के मार्क्सवादी बुनियादी आर्थिक सिद्धान्त, ये दोनों एक तरफा है। परन्तु, विडम्बना यह है कि दोनों मनुष्य और पर्यावरण विकास के सन्दर्भ की बजाए विकास, सम्पन्नता तथा प्रगति को धन वृद्धि के रूप में नापते हैं।

21. सांस्कृतिक पहलू की आवश्यकता है कि पाँचों स्तर पर सांस्कृतिक सभाएं स्थापित की जाएं।यह ऐसे जीने के तरीके (या जीवन शैली) की माँग करता है जो बुनियादी मानवीय एवं पर्यावरणीय मूल्यों से भरपूर हों तथा लोगों के बीच में तर्कसंगत मानवतावाद एवं पर्यावरणवादी चिन्तन, व्यवहार एवं संगठन को विकसित करता हो।

22. पाँचों स्तरों पर राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक सभाओं द्वारा बनाये गये कार्यक्रमों और नीतियों को लागू करने के लिए अपने-अपने राजनीतिक, विकास और सांस्कृतिक क्षेत्र के विशेषज्ञों के आयोगों का चुनाव करना। राजनीतिक विशेषज्ञों का आयोग राजनीतिक मुद्दों, जैसे–कानून और व्यवस्था, अपराध रोकथाम, न्यायिक कार्यवाही से सम्बन्ध रखे; विकास विशेषज्ञों का आयोग आर्थिक, वित्तीय मसलों, जैसे–विकास योजना, कृषि उद्योग, सेवाएं, वित्त और बजट को देखे और सांस्कृतिक विशेषज्ञों का आयोग शिक्षा, स्वास्थ्य, नैतिक मूल्यों एवं अन्य सांस्कृतिक विषय, जैसे–भाषा, संगीत, नृत्य, सिनेमा उद्योग आदि पर ध्यान दें।

23. प्रत्येक चुनी हुई संस्था अपने प्रभाव क्षेत्र में चाहे वह निचले स्तर की हो या ऊपर के स्तर की हो सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न होगी। किसी भी समय दो चुनी हुई संस्थाओं या सार्वजनिक संस्थाओं के मध्य मतभेद उत्पन्न हो तो सम्बन्धित इकाइयाँ अपने-अपने प्रतिनिधि समूहों को नियुक्त करेंगी जो बातचीत के जरिए सम्बन्धित प्रश्न का हल निकालेंगी। यदि मामला आपस में तय हो जाता है तो वह फैसला मान्य होगा। यदि दोनों पक्ष साझे निर्णय पर सहमत नहीं होते तो मसला सम्बन्धित लोगों द्वारा जनमतसंग्रह से हल किया जाएगा।

24. इसका मानना है कि किसी भौगोलिक इकाई की आन्तरिक सुरक्षा का प्रश्न सम्बन्धित लोगों द्वारा ही देखा जाए। विभिन्न भौगोलिक इकाइयों की सीमा-सुरक्षा का मुद्दा सुरक्षा एजेन्सी द्वारा देखा जाए तथा यह सुरक्षा एजेन्सी सम्बन्धित लोगों द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा स्वीकृत नियमों के अनुसार बनाई जाए।

25. समाज में प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनीक का संचालन यह नहीं होने देगी चाहे उस तकनीक में कितनी भी ज्यादा उत्पादक क्षमता हो।

Scanned with CamScanner

IV

काम की गतिविधि के सवाल पर हमें आमतौर पर लोगों में बिगड़ती हुई बेरोजगारी की समस्या के बारे में (उसकी प्रकृति, कारण और हल सहित) गहन जन जागृति अभियान चलाने और विशेषतौर पर यह अभियान विद्यार्थियों, युवाओं तथा प्रौढ़ अवस्था वाले बेरोजगारों में चलाना आवश्यक है।

प्रारम्भ में यह आवश्यक है कि बेरोजगारों (यानि, विद्यार्थियों, नौजवानों और मध्यम आयु वाले प्रोढ़ों) के बीच बिना किसी देरी के प्रचार अभियान और संगठनात्मक कार्य शुरू किया जाए। वो लोग जो किसी भी क्षेत्र, इलाके, राज्य, भारत या किसी अन्य देश में बेरोजगारी की समस्या के संबंध में एक न्यूनतम कार्यक्रम के आधार पर बेरोजगारों के बीच प्रचार अभियान चलाने और उन्हें संगठित करने के लिए तैयार है, उन्हें बिना कोई देरी किए आगे बढ़ने के लिए प्रेरित किया जाए। उचित यह रहेगा कि बेरोजगारों का संगठन प्रकृति-मानव केन्द्रित बेरोजगारों का संगठन, मोर्चा, आन्दोलन आदि के नाम से बनाया जाए एवं संगठित किया जाए। यह संगठन किसी और नाम से भी बनाया जा सकता है। परन्तु इसे बेरोजगारों के संबंध में प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम अपनाना चाहिए। बेरोजगारों से संबंधित कार्यक्रम में तात्कालिक, दीर्घकालीन व व्यवस्थागत कार्यक्रम शामिल रहेंगे।

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम को मानने वाला बेरोजगारों का संगठन अपने प्रोग्राम, संविधान और गतिविधियों के बारे में सभी निर्णय लेने में पूर्णतया स्वतंत्र रहेगा।

प्रकृति-मानव केन्द्रित कार्यक्रम को मानने वाले बेरोजगारों के संगठन का प्रकृति-मानव केन्द्रित जन आन्दोलन के साथ अत्यन्त मैत्रीपूर्ण संबंध रहेगा।

प्रकृति-मानव केन्द्रित बेरोजगारों का संगठन बेरोजगारों के सभी संगठनों को एकबद्ध कर एक संगठन बनाने का कार्य करेगा, यदि यह कार्य संभव नहीं होता तो यह सभी बेरोजगारों के संगठन का संयुक्त मोर्चा बनाने की कोशिश करेगा।

आर. पी. सराफ, सम्पादक : नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइंट
saraf_rp@rediffmail.com

(जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)

बेरोजगारी : इतिहास में पूंजीवाद के उद्‌भव से पहले कोई मुद्दा नहीं रहा

I

इतिहास दर्शाता है कि सामाजिक समस्या के रूप में बेरोजगारी का अस्तित्व प्राचीनकाल में दिखाई नहीं देता। सामान्य रूप से यूनानी या लेटिन भाषा में बेरोजगारी के भावार्थ का कोई शब्द नहीं मिलता तथा शायद पुरानी भारतीय भाषाओं में भी

Scanned with CamScanner

नहीं। अंग्रेजी भाषा का शब्द 'unemployment' (बेरोजगारी) 19वीं शताब्दी के मध्य तक आम इस्तेमाल में नहीं आया था।

खाद्य संग्रह और शिकार करने के श्रम विभाजन में (जो पत्थरों, डंडों, हड्डियों, तीरों व धनुषों आदि की तकनीक पर आधारित था) काम के अभाव का प्रश्न ही नहीं था क्योंकि प्रथम, जातियों और कबीलों के लोग सामूहिक रूप से कार्य करते थे, दूसरे वे 24 घण्टे के रोजाना श्रम के बाद मुश्किल से ही जिन्दा रहने लायक भोजन इकट्ठा कर पाते थे।

पशुपालन या चारगाह काल के श्रम विभाजन के युग में (जो तीर-कमान, पशुपालन और बाद में कांसे व तांबे के औजारों आदि की तकनीक पर आधारित था), जब साधारण श्रम मुख्य रूप से दासों द्वारा किया जाता था, बेरोजगारी शायद कोई बड़ी सामाजिक समस्या नहीं थी क्योंकि दास-मालिकों को बेकार रहने का नुकसान भुगतना पड़ता था। कभी-कभार भगौड़े दासों या स्वतंत्र कर्मियों को शायद बेरोजगारी का अनुभव होता होगा। लेकिन इस बात का कोई पक्का सबूत नहीं मिलता। कहा जाता है (और इस काल के संकेत भी है) कि प्राचीन महत्त्व के महान स्मारक जैसे कि मिश्र के पिरामिड, चीन की दीवार आदि शायद अकाल, महामारी या बाढ़ आदि के दौरान पीड़ितों को भुगतान सहित काम दिलाने के लिए बनाए गए थे। भिक्षावृत्ति का इन दिनों प्रचलन दिखाई देता है। लेकिन भिखारी और बेकार लोग समाज में बुरी दृष्टि से देखे जाते थे।

कृषि श्रम विभाजन के युग में (जो कि धातु के खासकर लोहे के पिघलाने, गठने, भूमि को उपजाऊ बनाने, खादान, चक्की चलाने, बुनने, चमड़े के काम, मिट्टी के काम, कागज बनाने, छापेखाने व जहाज बनाने आदि की तकनीक पर आधारित था) जब कृषिदास जमीन से बन्धुआ थे, दस्तकार और उनके शिक्षार्थी श्रम संघों से बंधे थे, गाँव स्वायत्तता या क्षेत्रीय स्वायत्तता मौजूद थी और शहरी लघु उद्योग स्थानीय प्रकृति के थे, तब बेरोजगारी एक गौण समस्या थी। घुमक्कड़, असामाजिक तत्त्व व भिखारी आदि जो काफी तादाद में थे, उस काल के बेरोजगारों में शामिल किये जा सकते हैं। सामाजिक व्यवहार, इन लोगों के प्रति घृणा का था। प्राकृतिक विपदाओं में सहायता कार्य का रिवाज तब भी जारी रहा। कृषि श्रम विभाजन के आखिरी दौर (15वीं व 16वीं सदी) में पश्चिम यूरोप में बेरोजगारों की संख्या में वृद्धि के तीन कारण थे। प्रथम, गहन खेती व भेड़ पालन कार्य के अस्तित्व में आने से देहाती श्रम उखड़ गया। दूसरे, शहरों में बढ़ रहे कारखानों के निमार्ण ने गाँव के लोगों को शहरों व कस्बों की तरफ आकर्षित किया। तीसरे, जनसंख्या में तेजी से वृद्धि हुई। 1600 ई. तक यूरोप में 6 से 7 करोड़ लोग थे जो 100 वर्ष पहले की तुलना में तकरीबन दोगुणा थे। आबादी वृद्धि की इस छलांग ने नए भूमि क्षेत्रों की खोज, निर्माण की वस्तुओं के व्यापार में वृद्धि व विकास को प्रेरित किया। परिणामत: 16वीं शताब्दी में पश्चिमी यूरोप के बहुत सारे शहरों में सहायता कार्यों व गरीबों को

Scanned with CamScanner

नियंत्रित करने के लिए कानून बनने शुरू हुए और हर प्रकार की भिक्षावृत्ति पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया।

II

17वीं शताब्दी में, जब निर्माण का श्रम-विभाजन (जो दस्तकारी पर आधारित था) पश्चिमी यूरोप में काफी हद तक फैल गया तो अर्थशास्त्रियों ने कृषिकारिता की सोच (जो शारीरिक श्रम की अवमानना करती थी) से हटकर मानवीय श्रम की महत्ता को महसूस करना शुरू किया। मानवीय श्रम के उचित उपयोग द्वारा धन अर्जित करने की बड़ी संभावनाएँ देखी जाने लगी। जो एकमात्र संस्था इस कार्य को कर सकती थी वह थी राज्य जो बेकारों को काम करने को बाध्य कर सकती थी। विलियम पैटी, जो ब्रिटेन का पहला अर्थशास्त्री थी, जिसने अपनी पुस्तक 'Treatise on Taxes and Contribution'' (1662) में सुझाव दिया कि अपराधियों को जेल में ठूंसने व मारने के बजाय गुलाम बनाना चाहिए। ''दास बनाने पर उनसे इतना सस्ता व इतना ज्यादा काम लिया जा सकता है जितना प्राकृतिक रूप से वे सहन कर सकें। इस प्रकार वे सामाजिक धन से एक व्यक्ति के छीने जाने के बजाय दो का योगदान करेंगे।'' आधुनिक अर्थशास्त्र की भाषा में 17वीं सदी के अर्थशास्त्रियों ने श्रम को उत्पादन का एक साधन माना। 18वीं सदी में घुमक्कड़ों व भिखारियों के सुधार के लिए कार्यगृहों की स्थापना हुई। लेकिन कार्यगृहों की योजना कारगर सिद्ध नहीं हुई, क्योंकि एक तो यह महंगी थी, दूसरे इस प्रकार के श्रमिकों में उचित दक्षता का अभाव था। इसकी विफलता से यह विचार पैदा हुआ (जो 18वीं सदी के फ्रांसीसी अर्थशास्त्री क्विजने व अंग्रेज अर्थशास्त्री एडम स्मिथ ने प्रतिस्थापित किया) कि समाज को इस बात से लाभ होगा कि इसके सदस्य जिसे उचित समझें उसी व्यवसाय को चुनें। व्यक्तिगत प्राप्ति की ख्वाहिश ही समाज की आर्थिक मशीन की प्रेरक शक्ति समझी गई, इस निजी स्वार्थ को प्राप्त करने की स्वतन्त्रता इस शक्ति की अहमियत बढ़ा देगी। प्रतिस्पर्धा सार्वजनिक हित के लिए निजी स्वार्थ को नियन्त्रित करने का तन्त्र है। प्रतिस्पर्धा कुशल व्यक्तियों को मात्र उचित पुरस्कार ही नहीं प्रदान करेगी बल्कि उसी क्षण कुशल व्यक्तियों को उनकी वृद्धि व कुशलता की बहुत ऊँची कीमत वसूल करने से भी रोकेगी। इस आर्थिक प्रतिस्पर्धा में राज्य एक निरपेक्ष भूमिका अदा कर सकता है। हालांकि एडमस्मिथ की पुस्तक 'Wealth of Nations' (1776) उपरोक्त विचारधारा का पक्षपोषण करती है मगर बेरोजगारी के बारे में कुछ नहीं कहती; बल्कि यह पूर्ण रोजगार को सामान्य बात मानती है। फ्रांसीसी अर्थशास्त्री जेबीसे ने कहा कि पूर्ति अपनी मांग पैदा करती है। चीजों की बहुतायत आर्थिक गतिविधि को रोकने के बजाय तेज करेगी। मालथ्यूस (19वीं सदी का प्रथम काल) ने अपने निराशावादी दृष्टिकोण कि बढ़ती जनसंख्या गरीबी को जन्म देती है, के बावजूद बेरोजगारी को कोई बड़ी समस्या नहीं माना। रिकार्डो (19वीं सदी का पूर्वार्द्ध) जिसने निजी स्वार्थ व प्रतियोगिता की एडम स्मिथ की पूर्व धारणाओं को स्वीकार किया, ने भी बेरोजगारी

Scanned with CamScanner

की तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। सिसमोन्दी (19वीं सदी का पूर्वार्द्ध) जिसने औद्योगिक पूंजीवाद की सख्ती से आलोचना की, रोजगार को एक अस्थाई घटना समझा, राज्य की निरपेक्षता की आलोचना की मगर कोई सुझाव नहीं दिया कि राज्य को क्या करना चाहिए।

19वीं सदी के पूर्वार्द्ध में औद्योगिक क्रांति (यानि कि उत्पादन के लिए शक्ति चालक मशीनों का इस्तेमाल तथा कारखाने की व्यवस्था) ने पश्चिमी देशों में जहाँ एक तरफ श्रम की कुशलता में वृद्धि की तो दूसरी तरफ श्रम के सापेक्षिक महत्व में कमी व भौतिक पूँजी के महत्व में वृद्धि की। शुरू-शुरू में, जब मशीनों ने श्रमिकों का स्थान लेना शुरू किया और जब काम की दशा थका देने वाली थी तो श्रमिकों व दस्तकारों ने नई तकनीक का विरोध किया और कुछ स्थानों पर मशीनों को तोड़ा भी। लेकिन धीरे-धीरे उन्होंने परिवर्तन से समझौता कर लिया तथा मशीनी श्रम विभाजन में पैदा होने वाली समस्याओं के हल के लिए श्रम-संघों की स्थापना की।

मशीनी श्रम विभाजन ने कुछ विचित्र हालात को पैदा किया; जब वस्तुओं की मांग होती तो उद्यमियों को श्रमिकों की जरूरत रहती और जब वस्तुएँ बाजारों को भर देती तो वे मजदूरों की छुट्टी करना शुरू कर देते। अत: विस्तार के काल में कभी संकुचन तो कभी ठहराव आने लगा। जैसे-जैसे औद्योगिकरण की गति तेज हुई, श्रम का लगातार अतिरिक्त रहना आम चिन्ता का विषय बना। जे. एस. मिल (मध्य 19वीं सदी) ने इस नए घटनाक्रम को दरयाफ्त किया मगर वह फिर भी आर्थिक सन्तुलन के एडम स्मिथ के सिद्धान्त को मानता रहा। मार्क्स पहला महान अर्थशास्त्री था जिसने बेरोजगारी को औद्योगिक पूँजीवाद का आवश्यक परिणाम माना और कहा कि यह श्रम की एक रिजर्व सेना को जन्म देता है। क्लासिकल अर्थशास्त्रियों ने श्रम की माँग व पूर्ति में असंतुलन को एक अस्थाई घटनाक्रम माना तथा इस प्रकार बेरोजगारी की समस्या को एक विपथन करार दिया। मार्क्स ने असंतुलन को पूंजीवाद की अन्तरनिहित विशेषता माना तथा इस प्रकार बेरोजगारी की समस्या को औद्योगिक पूँजीवाद का एक आम तत्व माना। फिर भी पूंजीवाद का विकल्प, यानि, मार्क्सवाद का एक दलीय नेतृत्व वाला एकाधिकार एवम् राजनीतिक, आर्थिक व सांस्कृतिक गतिविधियों पर राज्य का नियन्त्रण (जो समाजवाद या साम्यवाद कहलाता है) पूँजीवादी रोग से कोई ज्यादा बेहतर साबित नहीं हुआ है, दोनों (यानि, पूँजीवाद व साम्यवाद) सार रूप में पर्यावरण एवम् मानव हितों के लिए हानिकारक ही रहे हैं।

III

20वीं सदी के प्रारम्भ में पश्चिम में बेरोजगारी पर अनेक परचे व अध्ययन सामने आने शुरू हुए। अचानक ही बेरोजगारी की समस्या एक ज्वलंत समस्या बन गई। पुस्तकें, लेख और सरकारी जांच की रिपोर्टें पहले से ज्यादा तादात में आने लगी। 1917 में रूस की अक्तूबर क्रान्ति के बाद रूस में प्रत्येक काम करने वाले आदमी को काम का संवैधानिक अधिकार मिला जबकि 1920 के दशक में पश्चिम

Scanned with CamScanner

के कई देशों में बेरोजगारी भत्ते के अनेक कानून बने। 1928 में जाने-पहचाने दो अंग्रेज अर्थशास्त्रियों सिडनी व बीट्रीस वैब ने लिखा कि ब्रिटेन में पिछले 50 वर्षों के दौरान बेरोजगारी की दर कभी भी 2% से नीचे नहीं गई। 1929-1932 की विश्वव्यापी मन्दी ने अभूतपूर्व बेरोजगारी को जन्म दिया। सन् 1929 में जेनेवा स्थित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम ऑफिस ने बेरोजगारी के विश्व सूचकांक को प्रकाशित करना शुरू किया। 1932 में जेनेवा स्थित अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा जारी किया सूचकांक 1929 में 100 के आधार पर 291 था।

इस मन्दी के बाद 1936 में कारपोरेट-समर्थक प्रसिद्ध अंग्रेज अर्थशास्त्री कीन्स ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि विकसित देशों में बेरोजगारी का कारण प्रभावी मांग का कम होना है जिसे मुद्रा की पूर्ति बढ़ाकर या घाटे की वित्त व्यवस्था से लोगों के हाथों में ज्यादा धन पहुंचाकर दूर किया जा सकता है और इस प्रकार प्रत्येक मन्दी के काल के बाद बेरोजगारी के चक्र को रोका जा सकता है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद दो दशकों तक कीन्स का यह सिद्धान्त प्रभावी रहा। लेकिन उसके बाद इसका परिणाम भयंकर मुद्रास्फीति में निकला जिसने पश्चिम की अर्थव्यवस्था को खतरा पैदा कर दिया।

कीन्स के सिद्धान्त के असफल होने के बाद 1970 के दशक का क्लासिकल सिद्धान्त अपनी कारपोरेट दिशा- यानि, मिल्टन फ्रायडमैन के नव क्लासिकल सिद्धान्त (जो पूर्ति पक्षीय सिद्धान्त भी कहलाता है) के तौर पर अपने परिवर्तित रूप में आया, जिसने मुद्रा की मात्रा में कमी व मजदूरी की दरों में कमी करके बढती हुई मुद्रास्फीति व बेरोजगारी की समस्या का हल सुझाया। नव क्लासिकल सिद्धान्त ने मुद्रास्फीति का हल कुछ हद तक निकाला, मगर बेरोजगारी की समस्या और बदतर हो गई, यानि कि कीन्स के सिद्धान्त की तरह यह भी एक तरफा है जिसने बेरोजगारी का हल तो निकाला मगर मुद्रास्फीति को बदतर बना दिया। 1980 के दशक में राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन व ब्रिटिश प्रधानमंत्री मार्गरेट थैचर नव क्लासिकल सिद्धान्त के मुख्य अनुयायी रहे हैं उसके बाद यह सिद्धान्त भी अपना महत्व खो चुका है।

IV

पहले कीन्स का कारपोरेट समर्थक मांग का सिद्धान्त व उसके बाद मिल्टन फ्रायडमैन के कारपोरेट दिशा वाले पूर्ति के सिद्धान्त के नुस्खे के असफल होने के बाद पूँजी के बड़े सिद्धान्तवेत्ता सैद्धान्तिक तौर पर किंकर्तव्यविमूड हो गए। परन्तु शीघ्र ही दो महत्वपूर्ण घटनाओं ने उन्हें 'पूँजीवादी व्यवस्था कारगर है' इस पर जोर देने के लिए एक नई युक्ति गढने का मौका प्रदान कर दिया है। पहली घटना पूर्वी यूरोप के देशों में साम्यवादी शासकीय धड़े का विखण्डित होना था जिसने सम्पूर्ण साम्यवादी आन्दोलन को भ्रमित कर दिया तथा दूसरी घटना देशों के बीच तेजी से विकसित हो रही अन्तरनिर्भरता थी (इस स्थिति को दो विकसित तकनीक, यानि, सूचना तकनीक तथा सुपरसोनिक (ध्वनी से तेज) तकनीक ने तेजी से आगे बढाया है। पहली तकनीक

Scanned with CamScanner

ने मानवीय संचार को प्रकाश की गति दी है तथा दूसरी ने मनुष्य के आपस में मिलने की रफ्तार को ध्वनी की गति प्रदान की है)।

तद्नरूप कारपोरेट पूँजी के उच्चस्थ सिद्धान्तकारों तथा उसको लागू करने वाले उस्तादों ने एक नई रणनीति चुन ली जो इस बात पर जोर देती है कि दुनिया में तथा हर देश व क्षेत्र में बेरोजगारी व अन्य सभी सामाजिक बिमारियों जैसे असमानता, गरीबी, अशिक्षा तथा बिमारियाँ आदि जो दुनिया के लोगों को परेशानी में डाले हुए हैं, इन सबकी एक ही रामबाण दवा है और वह है पूंजी की वृद्धि दर।

उपरोक्त वर्णित उच्च वृद्धि दर की कारपोरेट रणनीति को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि पूँजी या पूँजी निवेश की गति सभी तरह के बन्धनों, रूकावटों तथा सीमाओं जैसे सभी सामाजिक सुरक्षा के प्रावधानों, मानव अधिकारों के लिहाज, श्रम अधिकारों, सीमा शुल्क व कर, बाजार आरोपण आदि से मुक्त रहे ताकि पूँजी की गति या इसकी वृद्धि दर में कोई बाधा उत्पन्न न हो। यहाँ कारपोरेट रणनीति प्रत्येक देश तथा प्रत्येक वित्तीय संस्था में तीन आर्थिक सुधारों का नुस्खा पेश करती है- यानि, उदारीकरण, निजीकरण तथा पुनर्सरचना- इस प्रकार यह रणनीति बिना अवरोध के कारपोरेट पूँजी के विकास के लिए एक अनुकूल अन्तर्राष्ट्रीय हालात का रास्ता हमवार करती है।

V

वृद्धि दर निर्देशित आर्थिक सुधारों की नई विकसित हो रही कारपोरेट रणनीति के अनुसरण में सन् 1994 में आर्थिक सहयोग और विकास संगठन (OECD) ने बेरोजगारी की समस्या पर कारपोरेट दिशा से विस्तृत विश्लेषण किया। इसने बेरोजगारी के कारणों के बारे में तब प्रचलित श्रम-समर्थक दो विचारों पर बेतहाशा हमला शुरू कर दिया।

प्रथमत: उक्त रिपोर्ट में यह बात कही गई है कि बेरोजगारी के लिए यांत्रिकी अर्थात टेक्नोलॉजी को दोष नहीं दिया जा सकता। क्योंकि जहाँ टेक्नोलॉजी लघु-कुशलता वाले कार्यों को समाप्त कर देती है, वहीं वह नए ढंग के उच्च कुशलता वाले तथा अधिक उत्पादक कार्यों का सृजन भी करती है। द्वितीयत: यह रिपोर्ट, इस विचारधारा का खण्डन करती है कि निम्न मजदूरी वाले देशों से किए जा रहे आयातों के कारण विकसित देशों में मजदूरी और बेरोजगारी पर उलटा प्रभाव पड़ रहा है। चूंकि, ओ.ई.सी.डी. देशों के सकल व्यय का केवल 1.5% ही अन्य देशों से किए गए आयात पर खर्च होता है, तथा कैसी ही स्थिति हो, ज्यो-ज्यों विकासशील देश धनी हो जाते हैं, वे ओ.ई.सी.डी. देशों से निर्यात के लिए नया क्षेत्र या बाजार उपलब्ध कराते हैं।

इसके अतिरिक्त, ओ.ई.सी.डी. रिपोर्ट, स्वयं इस संगठन के सदस्य राष्ट्रों की नीतियों को भी बेरोजगारी में वृद्धि के लिए दोषी मानती है। इस रिपोर्ट के अनुसार ओ.ई.सी.डी. देशों की दीर्घ काल से चली आ रही असफलता श्रम बाजार तथा

Scanned with CamScanner

विश्व अर्थ-व्यवस्था के परिवर्तनों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण को अपनाने में निहित है, जिसका पृथक-पृथक स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रकार का परिणाम निकलता है। दूसरे, इस रिपोर्ट में यूरोपीय देशों द्वारा द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद आई आर्थिक समृद्धि के बाद अपनाई गई सामाजिक नीतियों को, यथा, न्यूनतम मजदूरी, उदार बेरोजगारी परिलाभ, तथा नियोजन संरक्षण कानून- इन्हें उच्च मूल्य वाली अर्थात अधिक मंहगी अर्थव्यवस्थाएँ बनाने के लिए उत्तरदायी माना है।

आगे इस रिर्पोट में पश्चिमी यूरोपीय श्रमिक बाजारों पर इस बात का दोष आरोपित किया गया है कि इन्होंने वैश्वीकरण की मांग के अनुरूप मजदूरी एवं रोजगार के ढांचों में समुचित परिवर्तन नहीं किए है।

अन्ततोगत्वा ओ ई सी डी रिपोर्ट ने, बेरोजगारी की समस्या से निपटने के लिए, एक दुतरफा कार्य योजना का सुझाव प्रस्तुत किया है। ओ ई सी डी कार्य योजना के एक भाग में नियम कानून को समाप्त कर सुधार लाने की मांग की गई है। यह सरकारों से अपेक्षा करेगी कि गरीबी से संघर्ष करने के अधिक प्रत्यक्ष तरीकों को न्यूनतम मजदूरी के विकल्प के रूप में स्थापित किया जावे, अथवा न्यूनतम मजदूरी में आयु और क्षेत्र विशेष के आधार पर तो कुछ अन्तर किया जावे। कार्य योजना का यह भी सोचना है कि व्यापारिक प्रतिष्ठानों के लिए कामगीरों को एकत्र कर लेना तथा उनसे काम ले लेना अधिक आसान होना चाहिए। इसमें आगे यह तर्क दिया गया है कि यदि सरकारें केवल बेरोजगारी भत्ते की मात्रा को कम कर दे तो बेरोजगार अधिक उत्सुकता से काम अर्थात रोजगार की खोज करेंगे। कार्य योजना में कहा गया है कि दीर्घ-अवधि वाले परिलाभ केवल तभी दिये जाने चाहिए, जबकि उनका प्राप्तकर्त्ता सक्रिय श्रम बाजार कार्यक्रमों में भाग लेता है अर्थात अपनी भूमिका निभाता है।

ओ.ई.सी.डी. रिपोर्ट में दूसरी ओर बेहतर कार्य कुशलता या दक्षता का आह्वान किया गया है। इसका प्रारम्भ जल्दी होना चाहिए, अधिक पाठशाला-पूर्व शिक्षा हो, जल्दी स्कूल छोड़ने की स्थिति बहुत कम हो तथा स्कूल शिक्षा क्षेत्र अर्थात पाठ्यक्रम का दायरा बहुत व्यापक हो। कार्य योजना यह मांग करती है कि उद्योगों एवं विद्यालयों में निकट का सम्पर्क एवं समन्वय हो तथा वास्तविक कार्यक्षेत्र के बाहर प्रशिक्षण के अधिक अवसर उपलब्ध हो। यदि इन सब सिफारिशों एवं सुझावों की क्रियान्विति की जाती है तो ओ.ई.सी.डी. के सदस्य राष्ट्रों की श्रम शक्ति के लिए काम या रोजगार प्राप्ति की सम्भावना ही नहीं बढ़ेगी, बल्कि इस बात की सम्भावना भी बढ़ेगी की उन्हें ऊँची मजदूरी वाले व अधिक दक्षता वाले रोजगार उपलब्ध हों।

संयुक्त राज्य अमेरिका का आर्थिक अनुभव, बेरोजगारी की समस्या पर कुछ नई अन्तदृष्टि या परिज्ञान डालते हुए, यह बताता है कि संयुक्त राज्य की अर्थव्यवस्था ने 1980 के दशक में, इस अवधि में पश्चिमी यूरोप की तुलना में, कहीं अधिक लोगों को नौकरियां उपलब्ध कराई है अर्थात् कहीं अधिक रोजगार के अवसरों का सृजन किया है। यह इसलिए संभव था क्योंकि पश्चिमी यूरोप द्वारा श्रम बाजारों के लिए की

Scanned with CamScanner

गई व्यवस्था की क्रियान्विति करने के दौरान संयुक्त राज्य ने उत्पादन बाजारों के अवरोधकों को हटाने का प्रयास किया जो पश्चिमी यूरोप की अर्थव्यवस्थाओं पर हावी थे। उत्पाद बाजारों पर नियंत्रण व अवरोधक हटा कर संयुक्त राज्य फुटगर व्यवसाय, बैंकिग (प्रतिभूति एवं बंधक), टेलीविजन, फिल्म व विडियों व्यवसाय आदि में रोजगार के नए अवसर सृजित करने में सफल रहा। संयुक्त राज्य का अनुभव यह इंगित करता है कि श्रम बाजार एवं उत्पाद बाजार के नियमों का निरसन करने या उनमें छूट देने में हाथों-हाथ आगे बढ़ना वांछनीय है- ताकि इस प्रकार अधिक अच्छे वेतन वाले रोजगारों का सृजन हो सके। केवल श्रम बाजार का सुधार करने से निम्न कुशलता तथा न्यून वेतन वाले रोजगारों का ही सृजन होता है।

संयुक्त राज्य द्वारा जारी किए गए कानून के दोहरे उदारीकरण के बावजूद आई.बी.एम व फोर्ड मोटर्स जैसी अमेरिकन कम्पनियों सहित, औद्योगिक विश्व बड़ी तत्परता से रोजगार में कमी या छंटनी करता रहा, जिसके परिणामस्वरूप बेरोजगारों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। ऐसा इस आशा के साथ किया गया था कि इससे अधिक अच्छी कार्यकुशलता या दक्षता का सृजन होगा। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। प्रसिद्ध प्रबंध विशेषज्ञ, श्री पीटर डूकर ने इस संबंध में कहा है हम देख रहे हैं कि रोग के सही निदान के पहले बहुत अधिक अंग-विच्छेद किया जा रहा है। (अर्थात् अनुमान के आधार पर किए जा रहे प्रयोगों के अपेक्षित परिणाम नहीं निकल रहे हैं।)

यूनाइटेड स्टेट्स के जनगणना ब्यूरों के आर्थिक अध्ययन केन्द्र द्वारा किए गए एक अध्ययन के अनुसार विगत 10 वर्षों के दौरान जिन कारखानों ने श्रमिक संख्या में कमी कर दी उन्हें केवल 55 प्रतिशत उत्पादकता लाभ प्राप्त हुआ तथा बाकी 45 प्रतिशत लाभ उन कारखानों को हुआ जिन्होंने श्रमिक संख्या में वृद्धि की तथा जिनका सकल उत्पाद इस अवधि में दुगुने से भी अधिक हो गया। इस अध्ययन के लेखकों में से एक जॉन हाल्टीवेन्जर ने टिप्पणी की है कि– उत्पादकता वृद्धि की प्रक्रिया केवल मात्र श्रमिक संख्या की कमी करने से कहीं अधिक उग्र व कोलाहट वाली तथा कहीं अधिक उलझी हुई है। एक अन्य अमेरिकन परामर्श विशेषज्ञ, आर्थर लिटिल ने यह पाया है कि बड़ी मात्रा में की गई श्रमिक श्रंटनी तथा व्यूह-रचना में अचानक किए परिवर्तन से कम्पनियों के लिए आशा के विपरित कई समस्याएं खड़ी हो जाती है। इस प्रकार उक्त सभी विचारक इस बिन्दू पर एक मत है कि बड़े स्तर पर की गई श्रमिक छंटनी, आशा के अनुरुप उत्पादन करने में असफल रही है, तथा भविष्य में इस असफलता की मात्रा और घनी हो जाएगी क्योंकि वर्तमान समय में छंटनी का क्षेत्र और अधिक व्यापक होता जा रहा है।

नये आर्थिक सुधारों की कारपोरेट रणनीति की निराशाजनक कारगुजारी पर उपरोक्त टिप्पणी स्वयं-सिद्ध होती है।

आर.पी. सराफ, सम्पादक, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइन्ट
saraf_rp@rediffmail.com

Scanned with CamScanner

(जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)

बेरोजगारी : इसकी परिभाषा, प्रकार, कारण और निवारण

I

बेरोजगारी की परिभाषा के सवाल पर सामाजिक विज्ञान में बेरोजगारी की कोई प्रमाणिक अवधारणा या परिभाषा नहीं मिलती।

श्रम (आई एल ओ) सांख्यिकों के 1954 के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में इसे इस तरह से परिभाषित किया गया था :

1. किसी निश्चित दिन या किसी निश्चित सप्ताह के लिए एक निश्चित उम्र को प्राप्त करने वाले निम्न प्रकार के लोग बेरोजगारों की श्रेणी में आते हैं।
   - क. रोजगार के लिए उपलब्ध वे श्रमिक जिनका रोजगार का समझौता या तो खत्म कर दिया गया हो या स्थगित कर दिया गया हो और जो बिना काम के हो तथा लाभ या वेतन के लिए काम की तलाश में हों।
   - ख. वे लोग जो किसी निश्चित समयावधि के लिए (मामूली बीमारी को छोड़कर) लाभ या वेतन के लिए काम की तलाश में हो तथा जो पहले कभी रोजगार में न रहे हों और जिनका वर्तमान पद एक कामगार का न हो (यानी कि पूर्व रोजगार दाता वगैरह) या जो अब रिटायर हो गए हों।
   - ग. वे लोग जो बिना रोजगार के हैं, काम करने को तैयार हैं या जिन्होंने उस निश्चित अवधि के बाद काम शुरू करने का इन्तजाम किया है।
   - घ. वे लोग जिनकी बिना वेतन अस्थाई या अनिश्चित काल के लिए छुट्टी कर दी गई हो।
2. निम्न श्रेणी के लोगों को बेरोजगारों की श्रेणी में नहीं रखा जाता :

   क. वे लोग जो अपना व्यवसाय या फार्म स्थापित करना चाहते हैं लेकिन जिन्होंने अभी ऐसा किया नहीं है, जो कि लाभ या वेतन के लिए काम की तलाश में नहीं हो।

   ख. पूर्व अवैतनिक पारिवारिक कार्मिक जो काम पर नहीं है और ना ही काम की तलाश कर रहे हों।

   लेकिन अर्थशास्त्रियों के अनुसार यह परिभाषा- जो बेरोजगारों की दो मुख्य विशेषताओं पर जोर देती है जैसे (क) 'काम पर नहीं' (ख) 'काम की तलाश'- कम विकसित देशों में जहां अर्द्ध बेरोजगार आंशिक रूप में रोजगार प्राप्त किए होते हैं, ज्यादा सहायक नहीं होती।
3. उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हम कह सकते है कि सामान्य भाषा में बेरोजगारों से मतलब है वे लोग जो कहीं काम न कर रहे हों मगर सक्रिय रूप से काम की तलाश में हों तथा जो सीमान्त रोजगार प्राप्त किए हों मगर पूर्णकालिक

Scanned with CamScanner

काम की तलाश कर रहे हों। इस प्रकार बेरोजगार वह है जो काम न कर रहा हो और जो सक्रिय रूप से काम की तलाश कर रहा हो या जो आंशिक रूप से रोजगार प्राप्त हो मगर पूर्णकालिक काम की तलाश में हो।

4. बेरोजगारी को जब समाज पर लागू करके देखा जाय तो यह न इस्तेमाल किए गए मानवीय श्रम या मानव संसाधनों के दुरुपयोग को दर्शाती है। जिन्हें किसी भी उत्पादक कार्य में लगाया नहीं जा सकता।

5. अत: बेराजेगारी सिर्फ बेरोजगारों के लिए ही नहीं बल्कि समाज के लिए भी नुकसानदेह है।

II

बेरोजगारी के विशिष्ट प्रकारों के संबंध में विभिन्न अर्थशास्त्रियों के अनुसार विकसित देशों में बेरोजगारी निम्न रूपों में मिलती है– ऊँची मजदूरी दर, चक्रीय, अल्पकालिक (Frictional), ढांचागत और तकनीकी (समायोजन से सम्बन्धित– Pertaining to Rationalisation) जबकि कम विकसित देशों में उपरोक्त रूपों के अतिरिक्त यह अदृश्य अर्द्धबेरोजगारी, मौसमी और व्यापार की प्रतिकूल स्थिति आदि के रूप में भी पायी जाती है।

III

जहां तक बेरोजगारी के कारणों व समाधानों का प्रश्न है प्रत्येक किस्म की बेरोजगारी के इसके प्रतिपादक के अनुसर विशिष्ट कारण व हल है।

ऊँची मजदूरी दर बेरोजगारी का कारण क्लासिकल व नव-क्लासिकल अर्थशास्त्रियों के अनुसार मजदूरी की दर ऊँचा होना है जो उत्पादन की लागत को बढ़ाकर पूँजी निवेश और प्रभावी माँग को कम कर देती है। उनका विश्वास है कि बेरोजगारी औद्योगिक पूंजीवाद की वृत्ति नहीं बल्कि इसका विचलन है जो एक ऐसी अस्थाई घटना है जिसे मजदूरी की दर कम करके ठीक किया जा सकता है।

चक्रीय बेरोज़गारी, कीन्स के अनुसार तब पैदा होती है जब प्रभावी मांग में कमी के कारण अर्थव्यवस्था में उत्पादित भारी वस्तुओं का भण्डार न खपाया जा सके। मांग में कमी मनुष्य की कम खर्च करके बचाकर रखने की जन्मजात प्रवृत्ति के कारण पैदा होती है। यह पूंजी निवेश में कमी लाती है। जिसके परिणामस्वरूप रोजगार में कमी होती है। यह चक्रीय इसलिए कही जाती है क्योंकि व्यावसायिक मन्दियाँ लगभग नियत काल के अन्तराल पर आती रही है (उदाहरणार्थ : 1969-70, 74-75 और 80-82 के हाल ही के मन्दी काल)। इस प्रकार की बेरोजगारी को घाटे की अर्थव्यवस्था के जरिए पूंजी निवेश को बढ़ाकर यानि लोगों के हाथों में ज्यादा धन पहुंचाकर और मांग को बढ़ाकर दूर किया जा सकता है।

अल्पकालिक (Frictional) बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, एक विकसित हो रही और गतिमान अर्थव्यवस्था में जहां श्रम की मांग व पूर्ति लगभग सन्तुलन में

Scanned with CamScanner

हो, तब पैदा होती है जब पुराने पड़ रहे कारखाने बन्द हो जाते है। इससे श्रमिक बेरोजगार हो जाते हैं। वे या तो नये बन रहे उद्योगों में विस्थापित होते हैं या इस प्रकार के उद्योगों में काम पाने के लिए नये व्यवसाओं को सीखतें हैं। अल्पकालिक बेरोजगारी के कारण निम्न है– मशीनों या उपकरणों का बन्द हो जाना, माल की कमी होना, श्रम में गतिहीनता होना या श्रमिकों में तकनीकी स्तर की कमी होना आदि (जैसे कि द्वितीय विश्वयुद्ध के उद्योगों के बन्द होने पर श्रमिकों का शान्तिकालीन उद्योग में विस्थापित होना)। अल्पकालिक बेरोजगारी को निम्न तरीकों से कम किया जा सकता है: श्रमिकों को शीघ्र प्रशिक्षण की सहुलियतें देकर, श्रम विनिमय केन्द्र खोलकर और अन्तरणकाल में बेरोजगारों के लिए सामाजिक सुरक्षा का प्रबन्ध करके तथा तकनीकी परिवर्तन की गति को नियन्त्रित करके।

ढाँचागत बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, मानव संसाधनों का विकास भौतिक पूंजीगत संसाधनों की अपेक्षा अधिक तेज होता है। इससे दीर्घकालीन बेरोजगारी जन्म लेती है। इस प्रकार की बेरोजगारी मुख्यत: कम विकसित देशों में है जहाँ श्रम भौतिक पूँजी से ज्यादा होता है। विकसित देशों तक में वर्तमान दीर्घकालीन बेरोजगारी से पता चलता है कि भौतिक पूँजी में वृद्धि श्रम शक्ति में वृद्धि का मुकाबला नहीं कर पा रही। भौतिक पूंजी की कमी का उपलब्ध साधनों के कुशल उपयोग द्वारा, दुरुपयोग को रोककर, बचत व विनियोजन में वृद्धि करके, करों को विवेकपूर्ण करके तथा देशी व विदेशी ऋण को जुटाकर दूर किया जा सकता है।

तकनीकी बेरोजगारी (या समायोजन से सम्बन्धित बेरोजगारी unemployment pertaining to rationalisation), अर्थशास्त्रियों के अनुसार, तब उत्पन्न होती है जब (क) नई तकनीक पुरानी का स्थान लेती है, या (ख) प्रबन्ध की नई तकनीक पुरानी प्रबन्ध तकनीक का स्थान लेती है, जबकि उत्पादन तकनीक वही बनी रहती है। जब नई तकनीक व पुरानी तकनीक में बहुत ज्यादा अन्तर हो और पुरानी तकनीक श्रम की पुरानी तकनीक को मूल्य रहित कर दे तो तकनीकी बेरोजगारी ज्यादा कष्टप्रद होती है। इससे श्रमिक या तो अकुशल व्यवसायों में काम करने पर मजबूर होते हैं या वैकल्पिक प्रबन्ध न होने तक बेरोजगार रहते हैं यदि बेरोजगारों का समावेश करने के लिए नये रोजगार के अवसर पैदा किए जायें तो प्रबन्ध व्यवस्था में परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाली बेरोजगारी भी उसी तरह की समस्याएँ पैदा करती है। तेज आर्थिक वृद्धि की दर तकनीकी बेरोजगारी का एक समय कारण है तो दूसरे समय समाधान।

अदृश्य बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार कम विकसित देशों, खासकर उनके देहात से सम्बन्धित है। ग्रामीण बेरोजगारी के दो पहलू है– मौसमी व चिरकालिक। मौसमी बेरोजगारी तब पैदा होती है जब कृषि कार्य में लगी जनसंख्या कृषि कार्य के अभाव में 5-7 महीने लगातार बेकार रहती है। चिरकालिक बेरोजगारी अविकसित कृषि का चिरकालिक घटनाक्रम है। 1945 में मान्दलवाम ने अंदाजा

Scanned with CamScanner

लगाया कि यूनान, यूगोस्लाविया, पोलैंड, रूमानिया, बुलगेरिया में सक्रिय ग्रामीण कार्मिकों का 27 प्रतिशत फालतू था। 1951 में संयुक्त राष्ट्र संघ के एक अध्ययन से पता चला कि भारत व पाकिस्तान के बहुत सारे क्षेत्रों में तथा फिलीपीन व इन्डोनेशिया के कुछ हिस्सों में अतिरिक्त ग्रामीण जनसंख्या 20-25 प्रतिशत से कम नहीं थी। भारत के बारे में उपरोक्त अन्दाजा तब लगाया गया था जबकि भारतीय कृषि में 10 करोड़ लोग थे (जनगणना 1951)। अब जबकि यह संख्या 17 करोड़ 10लाख हो गई है (जनगणना 1981), इसका मतलब है कि 40 प्रतीशत से ज्यादा जनसंख्या (या प्रत्येक 5 सदस्यों के ग्रामीण परिवार में 2 लोग)फालतू हैं। जाहिरा तौर पर सब काम में लगे प्रतीत होते हैं मगर वास्तव में सब अर्द्ध बेरोजगार हैं। इस प्रकार की बेरोजगारी भौतिक पूंजी या दूसरे पूरक संसाधनों की कमी का परिणाम है (यानि कि पूंजी में वृद्धि की निम्न दर, ऊँचा पूंजी/उत्पाद अनुपात इत्यादि)। इसका पूंजी के भण्डार की मात्रा या उत्पादन की इकाइयों में वृद्धि करके हल किया जा सकता है ताकि अतिरिक्त धन्धों को पैदा करके अतिरिक्त जनसंख्या को खपाया जा सके।

मौसमी बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, विकसित और कम विकसित दोनों ही तरह के देशों में पाई जाती है। यह कुछ व्यवसायों की मौसमी प्रकृति के कारण होती है। उदाहरण के लिए गर्मियों में कुल्फी के कारखानों व नाविकों की ब्रिटेन में प्रभावी मांग होती है। दूसरे मौसमी उद्योगों के उदाहरणों में चावल मिल व चीनी के कारखानों को शामिल किया जा सकता है। कम विकसित देशों में कृषि 100 प्रतिशत मौसमी व्यवसाय है।

व्यापार की प्रतिकूल स्थिति से पैदा होने वाली बेरोजगारी, अर्थशास्त्रियों के अनुसार, कम विकसित देशों में अक्सर तब होती है जब प्राथमिक वस्तुओं की कीमतों में गिरावट के कारण रोजगार के स्तर में कमी आती है। इस प्रकार की बेरोजगारी को कम विकसित देशों के उत्पादन में विविधता लाकर और निर्यात बढ़ाकर दूर किया जा सकता है।

आर.पी. सराफ, सम्पादक, नेचर-हुमन सेन्ट्रिक व्यूप्वाइन्ट
saraf_rp@rediffmail.com

कांग्रेस-नेतृत्व वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन का कॉरपोरेट पूंजी का मानवीय चेहरे वाला सिद्धान्त केवल मिथ्या नाम है

हमारा उपर्युक्त आकलन दो तथ्यों से निकला है। प्रथम तथ्य यह है कि कॉरपोरेट एवं साम्यवादी मॉडल के समाजशास्त्रीय और विकास के सिद्धान्त एक तरफा और नुकसानदायक हैं और दूसरा तथ्य कॉरपोरेट और साम्यवादी दो व्यवस्थाओं के ऐतिहासिक अनुभव में निहित है।

Scanned with CamScanner

(i) कारपोरेट पूंजी का समाजशास्त्रीय सिद्धान्त

दोनों समाजशास्त्रीय सिद्धान्त (यानि कारपोरेट एवं साम्यवादी) यह मानते हैं कि हमारे ग्रह पर और किसी हद तक ब्रह्माण्ड में भी मानवजाति एक केन्द्रीय घटनाक्रम हैं। यह धारणा स्थापित करती है कि मानव समाज एवं उसके अन्दर हर वस्तु के एकमात्र रचियता लोग हैं। प्रकृति की व्यवस्था में मानव के अद्भुत घटनाक्रम होने की समझ मनुष्य को अपनी इच्छानुसार प्रकृति के सभी घटनाक्रमों के दोहन करने को प्रेरित करती है। यह समझ पूर्णतया पर्यावरणीय आयामों को नकारती है जिसके बिना मनुष्य का अस्तित्व ही संभव नहीं है तथा सामाजिक समानता की मानवीय इच्छा को पूर्णतया नजरअन्दाज करती है। जिसके बिना मनुष्य सामाजिक तौर पर वंचित महसूस करता है।

(ii) कारपोरेट पूंजी के विकास का सिद्धान्त

इनके (यानि, कारपोरेट एवम् साम्यवादी) विकास के सिद्धान्तों के संबंध में स्थिति यह है कि दोनों मानव समाज का मुख्य उद्देश्य पूंजी, धन व सम्पदा को हासिल करना मानते हैं। तथा सामाजिक विकास, सम्पन्नता एवं तरक्की का आधार इनकी वृद्धि होने में देखते हैं।

हालांकि, वर्तमान वास्तविकता और मानव समाज का सम्पूर्ण इतिहास दर्शाता है कि हमारी दुनिया में मानवीय संसाधन और प्राकृतिक संसाधन मानव समाज में हर चीज के निर्माण (जिसमें धन, सम्पदा व पूँजी भी शामिल है) के दो बुनियादी कारक हैं। बिना मानवीय और पर्यावरणीय कारकों (जिनसे मानव समाज की जिन्दगी और उसकी हर चीज बनी हुई है) के धन सम्पदा व पूंजी निर्माण या कारपोरेट व साम्यवादी व्यवस्था की प्रगति एक इंच भी आगे नहीं खिसक सकती है। इसलिए प्रकृति-मानव केन्द्रित नजरिए के अनुसार पूँजी एक दो तरफा घटनाक्रम है यानि, पर्यावरणीय संसाधन और मानव संसाधन। जबकि धन और सम्पदा केवल मात्र विनिमय का साधन है और यह मानव समाज में कोई सर्वोत्तम वस्तु नहीं है।

जैसा कि सभी जानते हैं कि पूँजीवाद का मुख्य उद्देश्य पैसा बनाना है तथा साम्यवाद की भी यही स्थिति है। साम्यवादी सिद्धान्त के रचियता मार्क्स ने पूँजी की धारणा को सर्वोत्तम महत्व दिया और दास-कैपिटल तीन खण्डों में (तीन हजार पृष्ठों से अधिक) में लिख डाला। पूँजी के स्रोत पर कॉरपोरेट धारणा से भिन्नता रखते हुए उन्होंने भी पूंजी की परिभाषा धन के रूप में ही की। जहाँ मार्क्स यह मानता है कि पूँजी मजदूरों के अतिरिक्त मूल्य से पैदा होती है जिसे पूँजीपति उसकी उचित मजदूरी अदा न करके शोषण के जरिए इकट्ठा करता है। वहीं कॉरपोरेट पूंजीवाद यह मानता है कि पूंजी उत्पादन की प्रक्रिया में पूँजी निवेश, तकनीक, श्रम एवं कच्चे माल के लगने से पैदा होती है तथा इस उत्पादन प्रक्रिया में पूँजी के मालिक की मुख्य भूमिका रहती है। मार्क्सवादी सिद्धान्त केवल-मात्र एक ही तत्व (यानि श्रम) को पूंजी का स्रोत मानने

Scanned with CamScanner

पर केन्द्रित है जबकि कारपोरेट सिद्धान्त उपरोक्त सभी पहलुओं पर जोर देता है एवं पूंजी के मालिक को केन्द्रीय स्थान पर रखता है। परन्तु दोनों इस बात पर एकमत है कि पूँजी धन या धन के संग्रह और विशाल सम्पदा की द्योतक है। इसलिए मार्क्सवाद और कारपोरेट पूँजीवाद दोनों सामाजिक विकास, सम्पन्नता और प्रगति को धन जुटाने, वृद्धि दर को बढ़ाने या पूँजी विस्तार के तौर पर परिभाषित करते हैं, और प्रत्येक चीज को चाहे वह पर्यावरणीय या मानवीय मुद्दा हो उसको गौण स्थान पर धकेलते हैं।

वाजपेयी की 'उज्ज्वल भारत' की धारणा भी बजट में 8% वृद्धि दर पर आधारित थी जबकि मनमोहनसिंह द्वारा प्रस्तावित बजट सन् 2004-2005 में 8% वृद्धि दर साझा न्यूनतम कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य होना प्रगट करता है।

कारपोरेट पूँजीपति या कारपोरेट राजनीतिज्ञों का उद्देश्य अधिकतम पैसा (व्यक्तिगत और सामाजिक दोनों) बनाने के अलावा कोई अन्य उद्देश्य नहीं है क्योंकि अधिकतम पैसा बनाना उनके अधिकतम विकास, सम्पन्नता और प्रगति को अभिव्यक्त करता है और यह अधिकतम पैसा मानवीय और पर्यावरणीय संसाधनों के अधिक दोहन और दुरुपयोग से ही बन सकता है।

(iii) कारपोरेट पूँजी के 'मानवीय चेहरा' होने का नारा केवल एक दिवास्वप्न है

दुनिया में कॉरपोरेट एवं साम्यवादी नमूनों के 200 वर्षों के ऐतिहासिक अनुभव ने इस तथ्य की पुष्टि की है कि कारपोरेट पूँजी के 'मानवीय चेहरे' वाला लुभावना नारा केवल मन के लड्डू खाना और दिवास्वप्न देखना है क्योंकि वर्तमान संसार में किसी भी देश और किसी भी क्षेत्र में यह दिवास्वप्न पुरा नहीं हुआ है। उदाहरणार्थ, द्वितीय विश्व-युद्ध की विजयी शक्तियों द्वारा सन् 1945 में दुनिया के आर्थिकता को विकसित करने तथा गरीब देशों से गरीबी हटाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की स्थापना की थी, परन्तु ये विकासशील देशों (जिनकी संख्या लगभग 120 है) में एक भी सम्पन्न या गरीबी से मुक्त मॉडल का निर्माण नहीं कर सके। क्या हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री जो नरसिम्हाराव सरकार में वित्तमंत्री रहे थे और सन् 1991-96 में बाजार समर्थक सुधार लागू किए, वे अब दावा कर सकते हैं कि पूरे देश में एक भी जिला गरीबी से मुक्त हो सका है? वास्तव में मुक्त बाजार वाले सुधारों के पिछले डेढ़ दशक में भारत में गरीबों की संख्या दुगुनी हो गई है। आगे, हमारे समय का मौजूदा अन्तर्राष्ट्रीय तौर पर मान्य सर्वोत्तम कारपोरेट मॉडल (यानि अमेरिका) जो दुनिया की एक तिहाई आमदनी (यानि, 33 ट्रिलियन डॉलर में से करीब 11 ट्रिलयन डालर) हड़प लेता है। जो असमानता और अन्याय का सर्वोच्च नमूना है जहाँ आबादी के 1 प्रतिशत लोग अमेरिका के 95 प्रतिशत लोगों की आमदनी से अधिक सम्पति के मालिक हैं और वहाँ 1 करोड़ लोग गरीबी की रेखा से नीचे जीवन बसर करते हैं। हमारी नजर में वर्तमान परिस्थितियों में कॉरपोरेट पूँजीवादी मॉडल एक महाशक्ति

Scanned with CamScanner

वाला कॉरपोरेट पूँजीवादी मॉडल में तो विकसित हो सकता है परन्तु गरीबी-समर्थक मॉडल की तरफ वापिस नहीं लौट सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कॉरपोरेट पूँजी विकास के अपने ही नियमों का अनुसरण करती है, यानि, अधिकतम शोषण तथा मानवीय एवं पर्यावरणीय संसाधनों को अधिकतम निचोड़ने के नियम का पालन करती है। पिछले 200 वर्षों से अधिक के कारपोरेट पूँजीपतियों (जिसमें 70 वर्षों का साम्यवादी मॉडल तथा 55 वर्षों का भारतीय नमूना) के व्यवहार द्वारा प्रदत्त निम्न तथ्यों पर नजर डालने पर यह आसानी से देखा जा सकता है।

एजेन्डा प्रीपेरिंग पीपल्स एडहॉक कमेटी ऑफ सार्क कन्ट्रीज का प्रस्तावित कार्यक्रम

1. हमारा पहला प्रस्ताव है कि सार्क देशों का एजेन्डा विश्व शान्ति स्थापित करने का होना चाहिए तथा सार्क देशों के बीच सभी विवादों (जैसे जम्मू-कश्मीर का विवाद) और प्रत्येक सार्क देश के अन्दर सभी सात देशों में विद्यमान विवादों को हल करने का होना चाहिए।

2. हमारा दूसरा प्रस्ताव है कि (क) हवा के प्रदूषण को बंद करके (ख) विद्यमान पानी के स्रोतों के घटते स्तर और उसकी गुणवत्ता में खराबी को रोककर (ग) भूमि के पतन (घ) जंगल कटाव और (ड़) जैव-विविधता विरोधी व्यवहार एवं कार्यवाहियों को समाप्त करके सम्पूर्ण सार्क क्षेत्र में एवं प्रत्येक देश में प्राकृतिक संसाधनों की बर्बादी को ठोस जन कार्यवाही की योजना बनाकर और प्राकृतिक संसाधनों को पुनर्जीवित करने की योजना को आगे ले जाने वाले प्रासंगिक जन संगठन बनाकर रोका जाए तथा प्रत्येक प्रदूषण फैलाने वाली तकनिकी को रोका जाए चाहे वह कितनी भी उपयोगी और उत्पादक नजर क्यों न आ रही हो।

3. हमारा तीसरा प्रस्ताव है कि दु:ख तकलीफ एवं कष्टमय जीवन जीने वाले लोगों जैसे गरीब, भूखे, बेरोजगार, असहाय आदि की पुन: सबलता के लिए निम्नलिखित तीन आधारभूत कदम उठाकर ठोस कार्य योजना बनायी जाए (i) आर्थिक मोर्चे पर : (क) कष्टमय जीवन-जीने वाले प्रत्येक व्यक्ति (यानि विश्व बैंक, आई एम एफ और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों द्वारा परिभाषित गरीबी की रेखा से नीचे जीने वाले व्यक्ति) को सामाजिक सुरक्षा का अधिकार हो, (ख) आय में फर्क कम करके 1:5 के अनुपात तक लाना और (ग) प्रत्येक ऐसे व्यक्ति को प्रतिदिन 2 डॉलर से अधिक सामाजिक सुरक्षा भत्ता देना। (ii) राजनीतिक मोर्चे पर : (क) दलगत विचार किये बिना प्रत्येक व्यक्तिगत उम्मीदवार (जो राज्य विधानसभा में अपने मतदाताओं के एक हजार हस्ताक्षर एवं केन्द्रीय विधानसभा के लिए पांच हजार हस्ताक्षर प्रस्तुत करे) को सरकारी खर्च पर चुनाव लड़ने का अधिकार हो। यदि मतदाताओं को 1/5 भाग प्रतिनिधि को वापिस बुलाने की मांग करे तो मतदाताओं

Scanned with CamScanner

को पुन: मतदान का अधिकार इस आधार पर हो कि प्रतिनिधि अपने मतदाताओं का विश्वास खो चुका है, (ख) विभिन्न प्रबंध प्रक्रियाओं में मजदूरों को एक तिहाई प्रतिनिधित्व प्रदान करना (iii) सांस्कृतिक मोर्चे पर भ्रष्टाचार, काला धन एवं काली अर्थव्यवस्था तथा पक्षपात को समाप्त करना।

4. हमारा चौथा प्रस्ताव एक तार्किक जनसंख्या नियन्त्रण नीति का है।

5. हमारा पाँचवां प्रस्ताव है कि सार्क देशों में निर्णय लेने की प्रक्रिया का तरीका सर्वसम्मति का अपनाया जावे।

6. हमारा छठा प्रस्ताव है कि महिलाओं के हितों की रक्षा के लिए सभी सामाजिक संस्थाओं एवं सभी स्तरों पर महिलाओं को 50% आरक्षण हो।

7. हमारा सातवां प्रस्ताव सभी संस्थाओं में असहायों को पर्याप्त आरक्षण हो।

प्रस्तावक

भारत के कमेटी सदस्य	नेपाल के कमेटी सदस्य
1. रूपायन भट्टाचार्य, प. बंगाल	1. डॉ. डी.बी. सिंह
2. सज्जन कुमार, हनुमानगढ़	2. बिष्णु प्रसाद तिमिलसिना
3. घनश्याम डेमोक्रेट, संयोजक जोधपुर	
पाकिस्तान के प्रतिनिधि	
1. मोहम्मद शफीक कुरैशी	2. नियाज हुसैन बाबर

Scanned with CamScanner

अनुक्रमणिका

1.	पानी के सवाल पर व्यापक दृष्टिकोण (इस पृथ्वी पर मानव तथा दूसरे जैव-जीवन के लिए हवा के बाद सबसे आवश्यक चीज) पंजाब जल समस्या : धूर्त राजनीतिज्ञों की पैदावार	... ...	1 2
2.	पूंजी के तीन मुख्य सिद्धान्त	...	4
3.	जम्मू-कश्मीर समस्या के त्रिपक्षीय हल के लिए मोर्चा जेके समस्या के हल का खाका	...	8
4.	सही व गलत में भेद करने का सवाल	...	11
5.	वर्तमान वैश्विक बेरोजगारी : मानव समुदाय के लिए एक भयावह समस्या, इसका कारण एवं निवारण (जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)	...	15
6.	बेरोजगारी : इतिहास में पूंजीवाद के उद्‌भव से पहले कोई मुद्दा नहीं रहा (जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)	...	25
7.	बेरोजगारी : इसकी परिभाषा, प्रकार, कारण और निवारण (जोधपुर में 29 से 31 अक्टूबर, 2004 को बेरोजगारी पर सम्मेलन में प्रस्तुत पेपर)	...	33
8.	कांग्रेस-नेतृत्व वाले संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन का कॉरपोरेट पूंजी का मानवीय चेहरे वाला सिद्धान्त केवल मिथ्या नाम है	...	36
9.	एजेन्डा प्रीपेरिंग पीपल्स एडहॉक कमेटी ऑफ सार्क कन्ट्रीज का प्रस्तावित कार्यक्रम	...	39

प्रकृति-मानव केन्द्रित व्यूपाइंट, संपादक आर.पी. सराफ द्वारा प्रकाशित
एवं जांगिड़ कम्प्यूटर्स, जोधपुर से मुद्रित

Scanned with CamScanner